हिन्दू-धर्म के ज्ञान-मय क्रिया-पक्ष की शोध-पूर्ण प्रस्तुति

'कौल-कल्पतरु'

(सं० १९९९ वि०-सन् १९४२ ई० से प्रकाशित)

श्रीगुरु-साधना
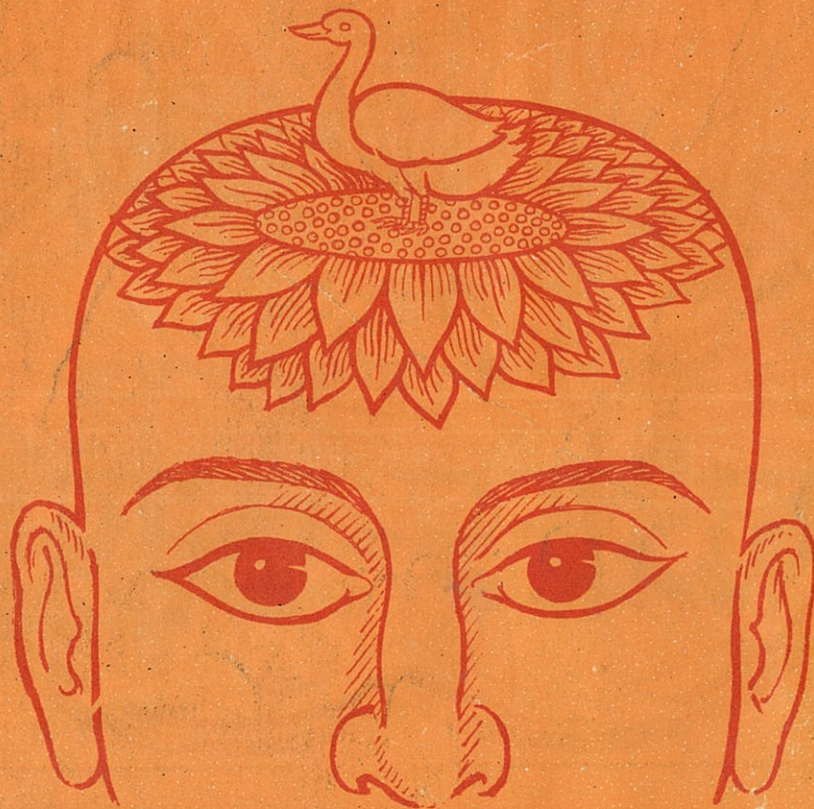
कौल-कल्पतरु 'चण्डी'

स्वर-विज्ञान

ज्योतिष-तन्त्र-योग की त्रिवेणी

मूल्य मात्र १५/- रु०
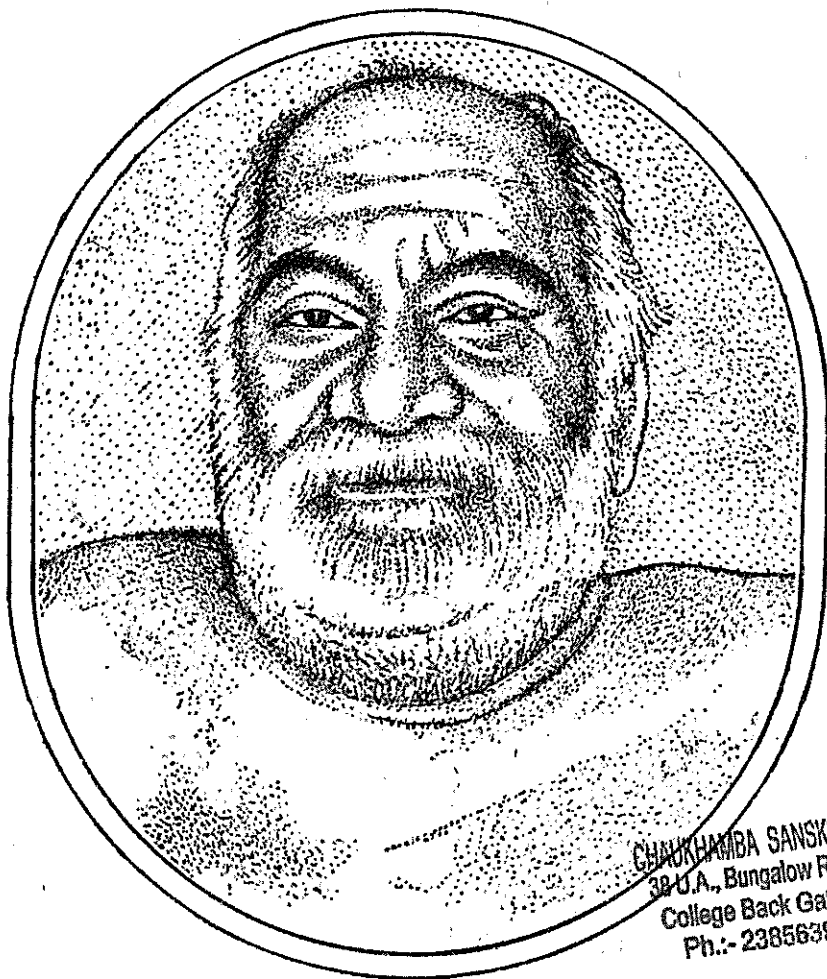
परम पूज्य ब्रह्म-लीन 'राष्ट्र-गुरु' स्वामी जी महाराज की पुण्य-स्मृति में

श्रीगुरु-साधना

अ-नु-क्र-म

नित्यं शुद्धं निराभासं, निराकारं निरञ्जनम् ।
नित्य - बोधं चिदानन्दं, गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ।।
आनन्दमानन्द-करं प्रसन्नं, ज्ञान-स्वरूपं निज-बोध-युक्तम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भव-रोग-वैद्यं, श्रीमद्-गुरुं नित्यमहं नमामि ।।

गुरु-पूजन की तन्त्रोक्त चार विधियाँ

१—बृहन्नील-तन्त्रोक्त श्रीगुरु-पूजा-विधान

पहले गुरुदेव को बैठने के लिए उत्तम 'आसन' दें, तब उनके पैरों को शुद्ध 'पाद्य' (जल) से धोकर तौलिए से सादर उन्हें पोछें। उनके शिर पर पुष्प से गङ्गा-जल छिड़ककर 'अर्घ्य' निवेदन करें। तब 'आचमन' हेतु शुद्ध पात्र में निर्मल जल दें। इसके बाद उन्हें सुगन्धित जल से 'स्नान' कराकर उत्तम 'वस्त्र' पहनाएँ। तब उनके मस्तक को भस्म या श्वेत चन्दन से त्रिपुण्ड्र लगाकर रक्त चन्दन या सिन्दूरादि 'गन्ध'-द्रव्यों से सुशोभित करें। फिर 'पुष्प'-माला से उन्हें अलंकृत कर सुगन्धित अगरबत्ती या 'धूप'-पदार्थ द्वारा उन्हें सुवासित करें। इसके बाद कर्पूर-युक्त घृत-'दीप' द्वारा भक्ति-पूर्वक मधुर घण्टी-ध्वनि के साथ उनकी आरती उतारें। तदनन्तर स्वादिष्ट चर्व्य (चबाने योग्य), चोष्य (चूसने योग्य), लेह्य (रसीले) आदि विविध रसवाले मनोहर खाद्य पदार्थों एवं विभिन्न प्रकार के मौसमी फलों से युक्त 'नैवेद्य' उनके भोजनार्थ निवेदन करें। भोजन की समाप्ति पर शुद्ध जल से उन्हें 'पुनः आचमन' करायें और सुगन्धित पुष्पों को लेकर उनकी 'पुष्पाञ्जलि' उन्हें निवेदित करें। इसके बाद मनोरम शय्या से युक्त पलँग या खाट पर उन्हें विश्राम करायें और यत्नपूर्वक उनकी चरण-सेवा करें।

इसी प्रकार अवसर मिलने पर गुरु-पत्नी, गुरु-पुत्रों की सेवा कर पुण्यार्जन करना चाहिए।

२—पुरश्चरण-रसोल्लास-तन्त्रोक्त सपत्नीक श्रीगुरु-पूजन

सपत्नीक अपने गुरुदेव को सभक्ति आमन्त्रित करें। उनके पधारने पर विविध सुगन्धों से युक्त तैल द्वारा उनके शरीर की मालिश करें। तब विभिन्न सुगन्धों से युक्त शुद्ध जल से उन्हें स्नान करायें। सुन्दर तौलियों द्वारा उनके शरीर को पोंछकर उन्हें उत्तम रेशमी वस्त्र पहनाएँ। फिर विविध प्रकार के चन्दनों, सिन्दूर आदि से उन्हें सुशोभित कर उन्हें मनोहर पुष्प-मालाओं से विभूषित करें। तदनन्तर धूप, दीप से सभक्ति उनका पूजन कर उन्हें खाद्य-पेयादि नैवेद्य से तृप्त कर सुगन्धित ताम्बूल देकर उन्हें सन्तुष्ट करें। इस प्रकार प्रकृति (शक्ति) के साथ श्रीगुरुदेव का पूजन करना चाहिए।

गुरुदेव के अङ्गों में चन्दन का लेप कर उनके कण्ठ में पुष्प-माला पहनाएँ तथा रत्न-जटित हारादि शङ्ख, कङ्गन, केयूर, नूपुरादि विविध आभूषणों से उन्हें सुशोभित करें। साक्षात् जगदीश्वरी उनकी पत्नी को रेशमी वस्त्रादि, स्वर्ण-रत्नादि आभूषणों से सन्तुष्ट करें। उनके बाईं ओर भक्ति-पूर्वक खड़े होकर उन्हें उनके अनुरूप दक्षिणा प्रदान करें। उनके पूजन का मन्त्र निम्न प्रकार है—

काम - बीजं (क्लीं) समुद्धृत्य, तस्याश्चाख्यान (नाम) मुद्धरेत्।
पुन: कामं (क्लीं) समुद्धृत्य, मन्त्रमेतदुदीरितम् ॥

अर्थात् 'क्लीं अमुकी देव्यम्बायै क्लीं नमः'—ऐसे मन्त्र से उनका पूजनादि करना चाहिए।

स-पत्नीक गुरुदेव की पूजा जो साधक उक्त विधि से करता है अथवा जो सहस्रार में सहस्र-दल-कमल के कोष के ऊपर श्रीगुरु-चरणों का ध्यान कर वहाँ स-पत्नीक गुरुदेव की पूजा उनकी अनुमति लेकर करता है, तो मात्र केवल एक बार ऐसी पूजा करने के फल-स्वरूप उसे तुरन्त अभीष्ट-सिद्धि प्राप्त हो जाती है। उसे दस हजार या लाखों जप करने से भी वैसी सिद्धि नहीं मिल सकती।

उक्त प्रकार प्रति-दिन पूजन करता हुआ यदि दिन में दक्षिणाचार के साथ एक लाख और रात्रि में वीराचार से एक लाख जप करे तथा गुरुदेव को दक्षिणा से सन्तुष्ट करे, तो उसे चन्द्र, सूर्य के ग्रहण-अनुष्ठानों के करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। उसे वाञ्छित सिद्धि सहज ही मिल जाती है।

३ कङ्काल-मालिनी-तन्त्रोक्त गुरु-पूजन

निर्गुण पर-ब्रह्म का महा-मन्त्र है दो अक्षरवाला 'गुरु' शब्द। यह बड़ा गोपनीय है। इसका ध्यान निम्न प्रकार करना चाहिए—

सहस्र-दल कमल के ऊपर उज्ज्वल अन्तरात्मा विराजमान है। उसके ऊपर 'नाद' और 'विन्दु' के मध्य में प्रकाशमान सिंहासन पर चाँदी के समान चमकीली आभावाले अपने गुरुदेव का ध्यान करना चाहिये, जो वीरासन में बैठे हुये हैं और आभूषणों से सुसज्जित हैं। श्वेत पुष्प-माला और श्वेत-वस्त्र धारण किए वे अपने कर-कमलों से 'वर' एवं 'अभय' दे रहे हैं। उनकी बाँईं जंघा पर दया-पूर्ण दृष्टि से देखती हुई उनकी शक्ति विराजमाना हैं, जो अपने दाएँ हाथ से गुरुदेव के सुन्दर शरीर का आलिङ्गन किए हैं। भगवती शक्ति लाल वस्त्राभूषण धारण किए हैं और अपने बाँएँ हाथ में रक्त-कमल लिए हैं।

ज्ञानानन्द से युक्त रहते हुए गुरुदेव का स्मरण उनके नाम-सहित उक्त प्रकार करना चाहिए। इस प्रकार ध्यान कर बुद्धिमान् साधक को मानस उपचारों से उनका पूजन करना चाहिए।

भूम्यात्मक 'गन्ध', भावात्मक 'पुष्प', वाय्वात्मक 'धूप', तैजसात्मक 'दीप', अमृतात्मक 'नैवेद्य', वरुणात्मक 'पानीय' (जल), आकाशात्मक 'मुकुट' प्रदान करे। इसी प्रकार वस्त्र, चामर, पादुका, छत्र, अलङ्कार आदि तत्सम्बन्धी मुद्राएँ दिखाकर देने चाहिए।

मानस पूजन कर चुकने पर यथा-शक्ति जप कर 'कवच-स्तोत्र', 'गुरु-गीता' का पाठ करे।

४ रुद्र-यामल-तन्त्रोक्त गुरु-पूजन

अरुणोदय के समय से लेकर रात्रि के आठ दण्ड तक का काल 'पशु-भाव' अर्थात् 'दक्षिणाचार' के अनुसार व्यतीत करना चाहिए। प्रातःकाल की नित्य-क्रिया करने के बाद पुनः शय्या पर बैठकर सिर में स्थित सहस्र-दल-कमल में गुरुदेव का ध्यान करे। यथा—

महान् गुरुदेव तरुण आदित्य के समान तेजस्वी हैं। उनकी महिमा अपार है। वे चन्द्र-शेखर हैं। अत्यन्त उज्ज्वल और कान्तिमान् हैं। दो नेत्र और दो भुजाएँ हैं। श्वेत वस्त्र धारण किये हैं। उनका शरीर धर्मार्थ-काम-मोक्ष-स्वरूप है। दोनों हाथों से वर और अभय दे रहे हैं। प्रफुल्लित कमल-पुष्प पर वे विराजमान हैं। वे सर्वज्ञ जगदीश्वर हैं। वन-माला और रत्नाभूषणों से सुशोभित हैं।

उक्त प्रकार ध्यान कर 'अन्तर्याग' की विधि से कमल-पुष्पों से गुरुदेव की पूजा कर अपनी दीर्घायु एवं आरोग्य की वृद्धि के लिए एकान्त-भक्ति के साथ उनके श्रीचरणों में प्रणाम करे। इस मानस पूजन के समय महा-गुरु-मन्त्र का जप करते रहना चाहिए। वह महा-मन्त्र निम्न प्रकार है—

मन्त्र के आदि और अन्त में प्रणव (ॐ), मध्य में वाग्भव (ऐं), उसके बाद गुरु-नाम, फिर 'आनन्दनाथ-गुरवे' शब्द कह कर 'नमः' का उच्चारण करे। अर्थात्—'ॐ ऐं अमुकानन्दनाथ-गुरवे नमः ॐ'—इस महा-मन्त्र का जप करने से साधक सभी सिद्धियों का स्वामी होता है। नित्य १०८ या १००८ बार जप कर, जप-फल समर्पित करे और वाग्भव (ऐं) से तीन बार प्रसन्नतापूर्वक प्राणायाम करे। तब 'श्रीगुरु-स्तव' और 'श्रीगुरु-कवच' आदि का पाठ करे।

● ● ●

श्रीगुरु-स्तवः

[१ रुद्रयामल-तन्त्रोक्त श्रीगुरु-स्तोत्र]

शिरः-स्थित-सु-पङ्कजे[1] , तरुण - कोटि-चन्द्र-प्रभम् ।
वराभय,- कराम्बुजं सकल - देवता - रूपिणम् ।।
भजामि वरदं गुरुं, किरण-चारु-शोभोज्ज्वलम्[2] ।
प्रकाशित - पद - द्वयाम्बुजमलक्त[3] - कोटि-प्रभम् ।।१

जगद् - भय - निवारणं, भुवन - भोग-मोक्ष-प्रदम् ।
गुरोः पाद-युगाम्बुजं, भजति[4] यत्र योगे जयम् ।।
भजामि परमं गुरुं, नयन - पद्म - मध्य - स्थितम् ।
भवाब्धि-भय-नाशनं, शमन-रोग - काल[5] - क्षयम् ।।२

प्रकाशित सु - पङ्कजे, सुदल[6] - षोडशाख्ये प्रभुम् ।
परापर-गुरुं भजे, सकल - राज्य[7] - भोग - प्रदम् ।।
विशाल-नयन-द्वयाम्बुज[8] - तडित्-प्रभा - मण्डलम् ।
कडार-मणि-पाटल - द्युतिमदिन्दु - विन्द्विन्दुकम्[9] ।।३

महौजसमुमापतेर्विगत - दक्ष - भागे हृदि ।
प्रभाकर - शतोज्ज्वलम्, सुविमलेन्दु-कोटयाननम् ।।
भजामि परमेष्ठिनं, गुरु-गभीर-रावोल्वनम्[10] ।
चलाचल - कलेवरं, प्रचपले दले द्वादशे ।।४

गुर्वङ्घ्रयब्जं[11] शुभं मादन-गण-दहनं[12] हेम-मञ्जीर[13]-सारम् ।
नाना-शब्दाद्भुताह्लादित-परिचरणा[14] चारु-चक्रं त्रिभङ्गम् ।।
नित्यं ध्यायेत् प्रभाते अरुण-शत-घटा-शोभनं योग-गम्यम् ।
नाभौ पद्मेऽति-कान्ते दश-दल-मणिभे भाव्यते योगिभिर्यत् ।।५

या माता मय-दानवादि-सुभुजा[15]-निर्माण[16]-सीमा-पुरे ।
स्वाधिष्ठान-निकेतने रस-दले वैकुण्ठ - मूले मया ।।
जन्मोद्धार-विकार-भाव-लहरी[17] वेद-प्रभा भाव्यते ।
कन्दर्पार्पित-शान्ति-योनि-जननी विष्णु-प्रिया शाङ्करी ।।६

या भासानल[१८]-कुण्डली कुल-पथोद्दामाभ[१९]-शोभाकरी ।
मूले पद्म-चतुर्दले कुल-वती निःश्वास-देशाश्रिता ।।
साक्षात्-कांक्षित-कल्प-वृक्ष-लतिका सुप्ता स्वयम्भू[२०]-प्रिया ।
नित्या योगि-भयापहा विष-हरा गुर्वम्बिका भाव्यते ।।७
उर्ध्वाम्भोरुह-निःसृतामृत-घटा[२१] मोदाज्जलाप्लाविता[२२] ।
गुर्वाद्या[२३] परिपातु सूक्ष्म-पथगा तेजोमयी भास्वती ।।
सूक्ष्मा साधन-गोचरामृत-मयी मूलादि-शीर्षाम्बुजे ।
पूज्या[२४] चेतसि भाव्यते भुवि कदा माता सदोर्ध्वोद्गमा ।।८
स्थिति - पालन - योगेन ध्यानेन पूजनेन वा ।
यः पठेत् प्रत्यहं व्याप्य स देवो न तु मानुषः ।।
कल्याणं धनदं चैव[२५] कीर्त्तिमायुर्यशः - श्रियम् ।
सायाह्ने च प्रभाते च पठेद्यदि सु-बुद्धिमान् ।।
स भवेत् साधक - श्रेष्ठः कल्पद्रुम - कलेवरः ।
स्तवस्यास्य प्रभावेन[२६] वागीशत्वमवाप्नुयात् ।।९

पाठान्तर—१ शिरसि सित-पङ्कजे । २ शोभाकुलम् । ३ मलत्क । ४ जयति । ५ काम । ६ मृदुल । ७ बाह्य । ८ नयनाम्बुज-द्वय । ९ मुद्रित रुद्रयामल में अशुद्ध छपा है—'कडार-मणि-पाटलेन्दु-बिन्दु-बिन्दुकम्' (तीन अक्षर कम हैं)। १० गुरुमतीव-वारोज्ज्वलम् । ११ गुर्वाद्यं च । १२ मदन-निदहनम् । १३ मञ्जरी । १४ परिजनात् । १५ स्व-भुजा । १६ निर्वाण । १७ सुप्रहरिणी । १८ भाषानन । १९ कुल-पथाच्छामाभ । २० सूद्भाषन्ती । २१ घटी । २२ मोदोद्वलाप्लाविता । २३ गुर्वास्या । २४ पूर्णा । २५ धन-धान्यं च । २६ प्रसादेन ।

[२ कुब्जिका-तन्त्रोक्त श्रीगुरु-स्तोत्रम्]

ॐ नमस्तुभ्यं महा-मन्त्र-दायिने शिव-रूपिणे । ब्रह्म-ज्ञान-प्रकाशाय, संसार-दुःख-तारिणे ।।१
अति-सौम्याय दिव्याय, वीराय ज्ञान-हारिणे । नमस्ते कुल-नाथाय, कुल-कौलिन्य-दायिने ।।२
शिव-तत्त्व-प्रबोधाय, ब्रह्म-तत्त्व-प्रकाशिने । नमस्ते गुरवे तुभ्यं, साधकाभय-दायिने ।।३
अनाचाराचार-भाव-बोधाय भक्त-हेतवे । भावाभाव-विनिर्मुक्ताय, मुक्ति-दात्रे नमो नमः ।।४
नमस्ते शम्भवे तुभ्यं, दिव्य-भाव-प्रकाशिने । ज्ञानानन्द-स्वरूपाय, विभवाय नमो नमः ।।५
शिवाय शक्ति-नाथाय, सच्चिदानन्द-रूपिणे । काम-रूपाय कामाय, काल-केलि-कलात्मने ।।६
कुल-पूजोपदेशाय, कुलाचार-स्वरूपिणे । आरक्त-लसच्छक्तये, सम-भाग-विभूतये ।।
नमस्तेऽस्तु महेशाय, नमस्तेऽस्तु नमो नमः ।।७
इदं स्तोत्रं पठेन्नित्यं, साधको गुरु-दिङ्-मुखः । प्रातरुत्थाय देवेशि ! ततो विद्या प्रसीदति ।।१
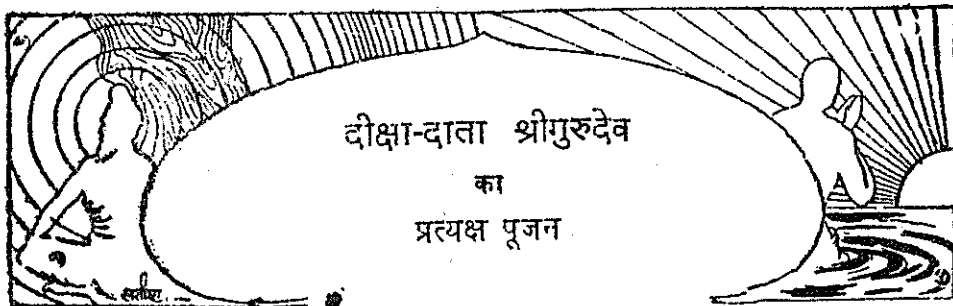
शाक्त साधना में—१ श्री गुरु, २ श्री परम गुरु, ३ श्री परापर गुरु और ४ श्री परमेष्ठी गुरु—इन 'गुरु-चतुष्टय' के पूजन-तर्पण का विधान नित्यार्चन में अनिवार्य रूप से मिलता है। इनके अतिरिक्त तीन गुरु-समूहों—१ दिव्यौघ, २ सिद्धौघ औ. ३ मानवौघ—के भी पूजन-तर्पण का विधान विस्तृत अर्चन में निर्दिष्ट है। कहीं-कहीं 'परौघ' नाम से एक चौथे गुरु-समूह के पूजन-तर्पण का भी प्रचलन है, जिसका स्थान उक्त ओघ-त्रय के पूर्व निर्दिष्ट है। यह पूजन सामान्यतः मानसिक रूप से ही कर्तव्य है क्योंकि अपने गुरुदेव के अतिरिक्त अन्य गुरुओं का साक्षात्कार तो प्रायः असम्भव ही है। हाँ, दीक्षा-दाता गुरुदेव प्रत्यक्ष पूजन के लिए सुलभ हो सकते हैं।

प्रत्यक्ष पूजन किस प्रकार किया जाय, इसके सम्बन्ध में 'परा-तन्त्र' में श्री भैरव ने देवी से निम्न वचन कहे हैं—

सम्पूज्य विविधैः पुष्पैर्माल्यैराभरणोत्तमैः,
दक्षिणाभिर्महेशानि ! भक्ष्यैर्भोज्यैः स - लेह्यकैः।
चोष्यैः पेयैश्च खाद्यैश्च, बलिं दत्वा च तर्पयेत्,
तत्र देवि ! गुरुं नत्वा, प्रार्थयेत् स्व-मनोरथम् ।।१
एवं सम्पूजयेद् देवि ! स्व - गुरुं पुण्य-वासरे,
स एव भैरवः साक्षात्, भुक्ति-मुक्तयोश्च भाजनम्।
गुरुं अभ्यर्चयेन्नित्यं, येन तुष्यति सुन्दरि,
एवं यो नार्चयेद् देवि ! स भवेद् ब्रह्म-राक्षसः ।।२

अर्थात् हे महेशानि ! विविध प्रकार की पुष्प-मालाओं, उत्तम आभूषणों और दक्षिणा द्वारा गुरुदेव का पूजन कर बलि-रूप में भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य, पेय और खाद्य पदार्थ प्रदान कर उन्हें तृप्त करे। तब हे देवि ! गुरुदेव को प्रणाम करे, उनसे अपने मनोरथ को पूर्ण करने की प्रार्थना करे।।१

प्रार्थना–मन्त्र वहीं यह बताया है—

ॐ विहितं विदधे नाथ ! विधेयं यत् कृपा-कर !
अविरुद्धं भवत्वत्र, तत् त्वदीय-प्रसादतः ।।

इस प्रकार हे देवि ! पुण्य दिवस में जो गुरुदेव का पूजन करता है, वह साक्षात् भैरव-स्वरूप होता है और भोग तथा मोक्ष दोनों का अधिकारी होता है। हे सुन्दरि ! प्रतिदिन गुरुदेव की पूजा करनी

चाहिए, जिससे वे प्रसन्न हों। इस प्रकार गुरुदेव का जो पूजन नहीं करता, वह, हे देवि! ब्रह्म-राक्षस होता है ।।२

गुरुदेव के प्रत्यक्ष अपने सामने विद्यमान होने पर शिष्य को बड़ी सावधानी के साथ रहना पड़ता है। इसी सम्बन्ध में विस्तार से तन्त्र-शास्त्र में निर्देश किए गए हैं। यथा—

१ गुरुदेव के दर्शन कभी खाली हाथ नहीं करना चाहिए। फल-पुष्प आदि यथा-शक्ति लेकर ही उनके सम्मुख जाना चाहिए। यदि कृपणता (कंजूसी) या शठता (ठगने की प्रवृत्ति) का भाव नहीं है, तो थोड़ी-सी वस्तु-मात्र—एक फूल ही बहुत बड़ा उपहार बन जाता है और सद्-गुरु उसे ही पाकर प्रसन्न हो उठते हैं। गुरुदेव के साथ कृपणता या शठता का व्यवहार करनेवाले शिष्य को भयानक नरक में जाना पड़ता है।

२ गुरु के वचन को मिथ्या सिद्ध कर जो अपने वचन को सत्य सिद्ध करता है और गुरु को पराजित करने की इच्छा जो अपने मन में रखता है, वह शिष्य घोर नरक के समुद्र में गिरता है।

३ जप-काल के सिवा अन्य किसी भी समय गुरुदेव के नाम का उच्चारण नहीं करना चाहिए।

४ गुरुदेव के जूठे भोजन को प्रसाद-रूप में बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ खाना चाहिए।

५ गुरुदेव जिस दिन या जिस समय सम्मुख हों, उस दिन या उस समय को श्रेष्ठ पुण्य-काल समझना चाहिए।

६ गुरुदेव, गुरु-पुत्र या गुरु-पत्नी की उपेक्षा करनेवाला शिष्य पतितावस्था को प्राप्त करता है।

७ पूजा करते समय गुरुदेव, गुरु-पुत्र या गुरु-पत्नी आ जायँ, तो उस पूजा को छोड़कर उठ जाय और उनका पूजन-सत्कार करने में तत्पर हो जाय।

८ गुरुदेव या उन जैसे पूज्य के साथ चलते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उनकी छाया का अपने द्वारा उल्लंघन न हो, अन्यथा पाप होता है।

९ गुरुदेव के बगल में न तो कभी बैठे और न कभी लेटे। अन्यथा घोर नरक में जाना पड़ता है।

१० गुरुदेव को देखते ही शिष्य को उठकर खड़े हो जाना चाहिए और भूमि पर दण्डवत् कर उन्हें प्रणाम करना चाहिए तथा उनकी प्रदक्षिणा कर उनका स्वागत-सत्कार करना चाहिए।

११ गुरुदेव को आते हुए देखकर आगे बढ़कर उनकी अभ्यर्थना करे और जब वे जाने लगें, तो उनके पीछे-पीछे चलता हुआ उन्हें गन्तव्य स्थान तक पहुँचाये या सादर अनुमति लेकर उन्हें विदा करे।

१२ गुरुदेव के सम्मुख कभी झूठ न बोले, कभी बहुत बात-चीत न करे।

१३ गुरुदेव के साथ ऋण का लेन-देन, खरीदने-बेचने का व्यवहार न करना चाहिए।

१४ गुरुदेव के सामने न तो किसी को दीक्षा दे, न व्याख्यान दे और न ही अपने वैभव का प्रदर्शन करे। उनके सम्मुख अपनी शय्या, आसन, वस्त्र, भूषण, पादुका आदि का त्याग करके नम्रता-पूर्वक ही रहे।

१५ गुरुदेव की शय्या, आसन, वाहन, पादुका, स्नानोदक आदि को कभी न लाँघे।

सारांश यह है कि जिस प्रकार देवता की प्रतिमा और पूजा-यन्त्र के प्रति सावधानी रखनी होती है, उसी प्रकार प्रत्यक्ष गुरुदेव को अपनी श्रद्धा, भक्ति और अनुशासन-पूर्ण सेवा द्वारा प्रसन्न करने का प्रयत्न करना चाहिए।

महा-महोपाध्याय स्व० पं० गोपीनाथ जी कविराज 'पद्म-भूषण' ने 'श्रीगुरु-तत्त्व' के सन्दर्भ में लिखा है कि—

"...गुरु-तत्त्व शब्द-ब्रह्म-स्वरूप है।...शब्द-ब्रह्म से उद्भूत चैतन्य-शक्ति-सम्पन्न शब्द या वाक्य ही 'मन्त्र'-रूप में परिगणित होता है। यह शब्द जिनके मुख से उच्चारित होकर शुश्रूषु शिष्य के कान में तथा उसके द्वारा हृदय में अर्पित होता है, उनके व्यवहार-भूमि में 'गुरु'-पद-वाच्य और 'गुरु'-रूप से पूजनीय होने पर भी वास्तव में यह 'मन्त्र' ही यथार्थ 'गुरु'-रूप में ग्राह्य है।...शब्द-ब्रह्म से परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी—चार प्रकार की वाक् उत्पन्न हुई है एवं वाक् से ही पृथ्वी से सदा-शिव पर्यन्त सब तत्त्व उत्पन्न हुए हैं। इसीलिए 'गुरु' व्यक्त और अव्यक्त रूप से समग्र विश्व में व्याप्त हैं...विश्व के बाहर शब्द-ब्रह्म के रूप में एवं शब्द-ब्रह्म का अतिक्रमण कर परब्रह्म सच्चिदानन्द-रूप से वे नित्य विराजमान हैं।...पूर्ण ब्रह्म का परम स्वरूप अव्यक्त है और वह बद्ध जीव के लिए अवाङ्-मनस्-गोचर है। इसीलिए वे जीव को स्वरूप-धरा देने के लिए गुरु-रूप से नीचे उतर आते हैं एवं जीव को धर कर क्रमशः फिर उसी अव्यक्त परम धाम में पहुँचा देते हैं। यही उनकी महा-कृपा का विलास है।..."

'गुरु'-तत्त्व के इस दार्शनिक विवेचन से भी यही प्रतिपादित होता है कि मन्त्र-दाता 'गुरुदेव' का मानव-स्वरूप देव-वत् ही पूजनीय है। पूजन द्वारा ही उनके माध्यम से परब्रह्म सच्चिदानन्द-स्वरूप का साक्षात्कार सम्भव है किन्तु यह पूजन किया किस प्रकार जाय? इस प्रश्न का उत्तर संक्षेप में पहले ही 'परा-तन्त्र' के वचनों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। विस्तृत समाधान आगे प्रकाशित श्रीगुरु-'पूजन-विधि' से प्राप्य है। इस 'पूजन-विधि' के अन्तर्गत पहले काली-कुल के साधकों के लिए 'परा-तन्त्रोक्त पूजा-विधि' दी गई है। फिर श्रीकुल के साधकों के लिए पूजा-विधि दी गई है, जो कांची-काम-कोटि-पीठाधीश्वर द्वारा संस्तुत 'श्रीविद्या-सपर्या-पद्धति' के आधार पर लिखी गई है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य तन्त्रों में बताई गई विधियाँ भी उद्धृत की गई हैं। सुविधानुसार किसी भी विधि को अपनाया जा सकता है।

१ काली-कुल के साधकों के लिए पूजा-विधि

पूजा-स्थान पर सिन्दूर से विन्दु, त्रिकोण, अष्ट-कोण, वृत्त, अष्ट-दल, तीन वृत्त, भूपुरात्मक यन्त्र लिखे। देखिए— पृष्ठ ११ पर प्रकाशित रेखा-चित्र।

भूपुर के चार द्वारों में गन्धाक्षत-पुष्पों से क्रमशः—१ गणेश, २ धर्म-राज, ३ वरुणदेव और ४ कुबेर का पूजन करे।

अष्ट-दलों में उसी प्रकार क्रमशः—१ असिताङ्ग, २ रुरु, ३ चण्ड, ४ क्रोधेश, ५ उन्मत्त, ६ कपाली, ७ भीषण और ८ संहार भैरवों का पूजन करे।

आठ त्रिकोणों में पूर्ववत् क्रमशः—१ परमानन्दनाथ, २ प्रकाशानन्दनाथ, ३ भोगानन्दनाथ, ४ समयानन्दनाथ, ५ गगनानन्दनाथ, ६ विश्वानन्दनाथ, ७ भुवनानन्दनाथ और ८ स्वात्मानन्दनाथ—इन आठ कुल-गुरुओं का पूजन करे।

मध्य में त्रिकोण के तीनों कोणों में क्रमशः १ मदनानन्दनाथ, २ लीलानन्दनाथ और ३ महेश्वरानन्दनाथ का पूजन करे।

तदनन्तर केन्द्रस्थ विन्दु में गुरुदेव का पूजन करे। इसके बाद उसी विन्दु के ऊपर आसन बिछा कर श्रीगुरुदेव को सादर लाकर बिठाये। उनका विधिवत् पूजन कर उनकी अनुमति लेकर हृदय में अपने मूल-मन्त्र से दक्षिण कालिका की पूजाकर महा-काल का पूजन करे। फिर वहीं कामदेव और कामेश्वरी का पूजन करे। अपने शिर में गुरु, परम गुरु, परात्पर गुरु और परमेष्ठि गुरु का पूजन कर सम्मुख विराजमान गुरुदेव को पुष्प-माला अर्पित कर दक्षिणा प्रदान करे और उत्तम भोजन एवं पेय से उन्हें तृप्त कर उनके शुभाशीर्वाद प्राप्त करे।

२ श्रीकुल के साधकों के लिए पूजा-विधि

पृष्ठ ११ पर प्रकाशित रेखा-चित्र के अनुरूप नौ-त्रिकोणात्मक यन्त्र पूजा-स्थान पर बिल्व या अनार की कलम से रक्त-चन्दन से अंकित करे। मध्य त्रिकोण के विन्दु (१) स्थान एवं चारों ओर के आठों त्रिकोणों को लक्ष्य कर निम्न मन्त्र से पुष्पांजलि अर्पित करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं परौघेभ्यो नमः

फिर विन्दु-स्थान में महा-पादुका का पूजन-तर्पण निम्न मन्त्र से करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः ऐं ग्लौं ह्स्ख्फ्रें ह-स-क्ष-म-ल-व-र-यूं ह्सौः स-ह-क्ष-म-ल-व-र-यीं स्हौः श्रीविद्यानन्दनाथात्मक-चर्यानन्दनाथ-श्रीमहा-पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नमो भगवते दक्षिणामूर्तये मह्यं मेधां प्रज्ञां प्रयच्छ स्वाहा श्रीमेधा-दक्षिणामूर्ति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

अब मध्य त्रिकोण के बाँएँ कोण से प्रारम्भ कर पूर्वस्थ रेखा में निम्न मन्त्रों से पूजन-तर्पण करे। प्रत्येक मन्त्र के आदि में 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं' और अन्त में 'श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' जोड़ ले। यथा—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं उड्डीशानन्दनाथ-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। ४ प्रकाशानन्दनाथ०। ४ विमर्शानन्दनाथ०। ४ आनन्दानन्दनाथ०।

अब इसी प्रकार दाएँ कोण से प्रारम्भ कर दक्षिण की रेखा में पूर्ववत् निम्न मन्त्रों से पूजन-तर्पण करे—

४ षष्ठीशानन्दनाथ०। ४ ज्ञानानन्दनाथ। ४ सत्यानन्दनाथ। ४ पूर्णानन्दनाथ।

तब अपने सम्मुख कोण से प्रारम्भ कर उत्तर (बाँई) रेखा में पूर्व-वत् निम्न मन्त्रों से पूजन-तर्पण करे—

४ मित्रेशानन्दनाथ०। ४ स्वभावानन्दनाथ०। ४ प्रतिभानन्दनाथ०। ४ सुभगानन्दनाथ०।

इसके बाद मध्य त्रिकोण की पूर्वस्थ रेखा के ऊपर तीन रेखाओं में क्रमशः दिव्यौघ, सिद्धौघ और मानवौघ गुरुओं का पूजन-तर्पण करे। पहले 'ओघ-त्रय' के प्रति निम्न मन्त्र से पुष्पांजलि अर्पित करे—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं दिव्यौघ-सिद्धौघ - मानवौघेभ्यो नमः ।

अब नीचे से प्रथम रेखा में पूर्व-वत् मन्त्रों से दिव्यौघ गुरुओं का पूजन-तर्पण करे—

४ पर-प्रकाशानन्दनाथ० । ४ पर-शिवानन्दनाथ । ४ परा-शक्त्यम्बा० । ४ कौलेश्वरानन्दनाथ०॥ ४ शुक्ल-देव्यम्बा० । ४ कुलेश्वरानन्दनाथ । ४ कामेश्वर्यम्बा० ।

द्वितीय रेखा में पूर्व-वत् निम्न मन्त्रों से सिद्धौघ-गुरुओं का पूजन-तर्पण करे—

४ भोगानन्दनाथ० । ४ क्लिन्नानन्दनाथ० । ४ समयानन्दनाथ० । ४ सहजानन्दनाथ ० ।

सबसे ऊपर स्थित तृतीय रेखा में पूर्ववत् निम्न मन्त्रों से मानवौघ गुरुओं का पूजन-तर्पण करे—

४ गगनानन्दनाथ० । ४ विश्वानन्दनाथ० । ४ विमलानन्दनाथ० । ४ मदनानन्दनाथ० । ४ भुवनानन्दनाथ ● । ४ प्रियानन्दनाथ० । ४ श्रीशङ्कर-भगवत्पाद० ।

इसके बाद प्रथम रेखा में अपने 'परमेष्ठि-गुरु' का, द्वितीय रेखा में अपने 'परम-गुरु' का और तृतीय रेखा में अपने 'गुरुदेव' का उनके नाम-मन्त्रों से पूजन-तर्पण करे ।
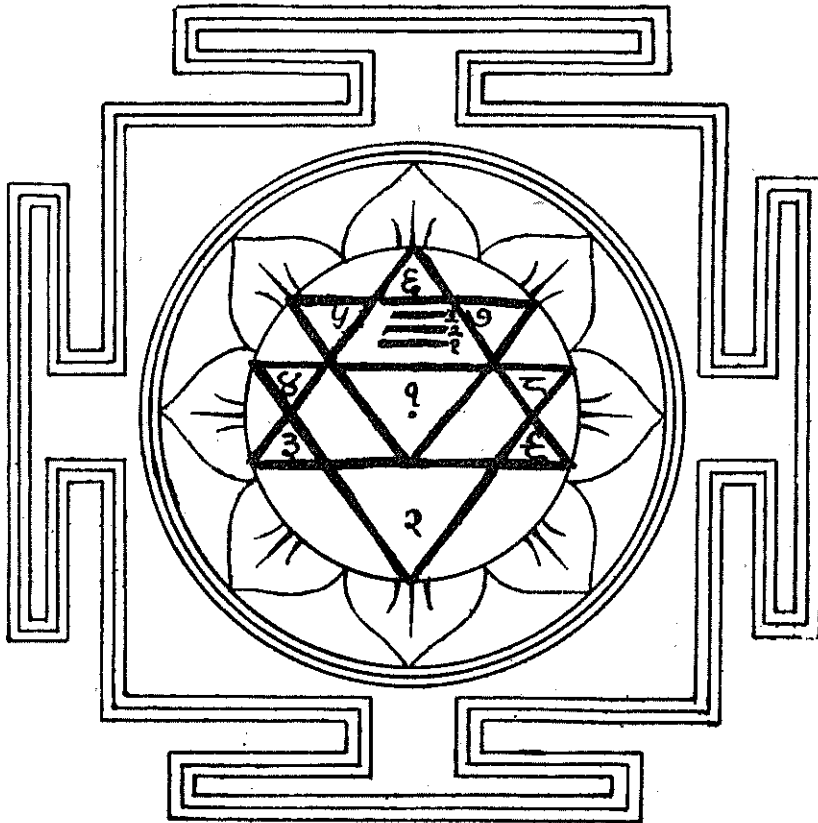
श्रीगुरु-ध्यान-योग

श्रीगुरु-चक्र का वर्णन

दोनों भौहों के बीच का स्थान भृकुटि कहलाता है। इस भृकुटि की सीध में पीछे मेरु-दण्ड के ऊर्ध्व-भाग में स्थित 'सुषुम्णा नाड़ी' में 'आज्ञा-चक्र' है। यह आज्ञा-चक्र दो पंखुड़ियोंवाले कमल-पुष्प (द्वि-दल पद्म) जैसा है।

आज्ञा-चक्र के ऊपर ब्रह्म-रन्ध्र (सिर के सबसे अग्र-भाग) में एक हजार पंखुड़ियों-वाला (सहस्र-दल पद्म) अधोमुख सफेद कमल—जैसा 'सहस्रार-चक्र' है। इस कमल की डण्डी या नाल (मृणाल) रूपी सुषुम्णा-नाड़ी में स्थित अत्यन्त सूक्ष्म चित्रिणी नाड़ी अथवा परम आश्चर्य-मयी 'कुण्डलिनी'-शक्ति है।

सहस्रार का यह महा-कमल साक्षात् परम शिव का स्थान है एवं नित्य आनन्द-मय है। इस महा-कमल की पंखुड़ियाँ सदा सभी शक्तियों से युक्त रहती हैं। श्वेत, रक्त, पीत, कृष्ण, हरित, चित्र-विचित्र, विविध प्रकार के रङ्गों से वे सुशोभित हैं।

ये पंखुड़ियाँ कभी तो श्वेत या कृष्ण-वर्ण की होती हैं, तो कभी क्षण भर में वे उत्तम हरे रङ्ग की होती हैं, तो किसी क्षण में, वे अनेक रङ्ग धारण कर लेती हैं। इस प्रकार यह कमल विविध प्रकार के रूप से सदा शोभायमान रहता है।

इस महा-कमल की सहस्र पंखुड़ियों के बीच में एक गोलाकार, अमृत-सागर-वत्, विशाल, करोड़ों चन्द्रमाओं की प्रभावाला, सुन्दर "बीज-कोष" है। इसे 'कर्णिका' अथवा 'वराट्' भी कहते हैं। यह सदैव विविध प्रकार की शक्तियों से युक्त रहता है।

ब्रह्म-रन्ध्र में सहस्रार-चक्र का महा-कमल तो अधोमुख रहता है किन्तु उसका अमृत-मय 'बीज-कोष' सदा ऊर्ध्व-मुख रहता है। यह 'बीज-कोष' त्रिकोणाकार-रूप में कुण्डलिनी-शक्ति अथवा सुषुम्णा नाड़ी (महा-कमल की डण्डी या नाल-स्वरूप) से युक्त है।

शुद्ध स्वर्ण की आभावाला यह 'बीज-कोष' सभी शक्तियों से युक्त अति सक्षम है। इस 'बीज-कोष' में एक 'त्रिकोण-मण्डल' विद्यमान है। इस त्रिकोण-मण्डल के भीतरी तीनों कोणों में यथा-क्रम 'ह, ल, क्ष'—ये तीन वर्ण हैं। इसके अतिरिक्त त्रिकोण की तीन भुजाओं के रूप में समस्त मातृका-वर्ण विद्यमान हैं। त्रिकोण की बाँईं भुजा 'अ' से लेकर 'अः' तक, ऊपर की भुजा 'क' से लेकर 'त' तक और दाहिनी भुजा 'थ' से लेकर 'स' तक के सोलह-

सोलह अक्षरों की हैं। इस त्रिकोण-मण्डल को 'योनि-पीठ' और 'शक्ति-मण्डल' भी कहते हैं। इस त्रिकोण-मण्डल के मध्य में एक तेजो-मय 'बिन्दु' (०) है। उसके ऊपर दण्डाकार तेजो-मय 'नाद' (˘) विद्यमान है।

तेजो-मय नाद के ऊपर निर्धूम अग्नि-शिखा की भाँति 'तेज-पुञ्ज' है। इस 'तेज-पुञ्ज' के ऊपर एक श्वेत हंस विराजमान है। इस हंस का शरीर ज्ञान-मय है। हंस के दोनों पक्ष 'आगम' (वेद) और 'निगम' (तन्त्र) हैं। हंस के दोनों चरण शिव-शक्ति-मय, चोंच प्रणव (ॐ)—स्वरूप एवं आँख और कण्ठ काम-कला-रूप हैं।

इस श्वेत हंस के ऊपर श्वेत-वर्ण वाग्भव-बीज 'ऐं' विद्यमान है। इसी वाग्भव-बीज 'ऐं' के बगल में श्रीगुरु-देव विराज रहे हैं। उनका वर्ण श्वेत एवं कोटि-सूर्य की भाँति प्रभा-वाला है। उनके दो हाथ हैं—एक हाथ वर और दूसरा हाथ अभय-मुद्रा से सुशोभित है। श्रीगुरु-देव श्वेत-माला और श्वेत-गन्ध (चन्दन) धारण किये हुए हैं एवं श्वेत-वस्त्रों से शोभायमान हैं। साथ ही श्रीगुरु-देव अनोखी हास्य-युक्त मुस्कान व करुणा-दृष्टि के द्वारा कृपा की अमृत-वर्षा कर रहे हैं।

श्रीगुरु-देव के बाँई ओर, बिजली की रेखा-जैसी चकाचौंध पैदा करती हुई श्रीगुरु-शक्तयम्बा लाल रङ्ग के वस्त्र पहने हुए और विविध आभूषणों से शोभित विराज-मान हैं। ये श्रीगुरु-शक्तयम्बा अपने दाहिने हाथ से श्रीगुरु-देव की कमर को आलिङ्गन किए हुए हैं तथा बाँयें हाथ में कमल धारण करती हुई प्रसन्न-मुखी स्थित हैं।

श्रीगुरु-शक्तयम्बा सम्पूर्ण जगत् की कारण-भूता, अनन्त ब्रह्माण्डों को रात-दिन खेल-खेल में ही बनाने-पालने और बिगाड़नेवाली, कहीं पुरुष-रूप से, तो कहीं स्त्री-रूप से और कहीं पशु-रूप से सम्पूर्ण संसार की आराध्या, इष्ट-देवी हैं।

श्रीगुरु-देव और श्रीगुरु-शक्तयम्बा—दो स्वरूप दिखाई देते हैं, किन्तु वास्तव में ये दोनों एक ही हैं। श्रीगुरु-चक्र में जब इस प्रकार श्रीगुरु-देव—श्रीगुरु-शक्तयम्बा के स्पष्ट दिव्य-दर्शन भाग्यवान् साधक को हो जाते हैं, जो नित्य अभ्यास एवं श्रीगुरु-कृपा से ही हो पाते हैं, तो साधक तत्काल कृत-कृत्य हो जाता है। संसार की सम्पूर्ण क्षुद्र सिद्धियाँ, अष्ट-महा-सिद्धियाँ और परम सिद्धि (मोक्ष) उसके पैरों में लोटने लगती हैं।

पादुका के मन्त्र-जप-सहित श्रीगुरु-ध्यान-योग

श्रीगुरु-ध्यान हेतु उपर्युक्त प्रकार से सम्पूर्ण 'श्रीगुरु-चक्र' का क्रम-पूर्वक सिलसिले से दर्शन करे। पुनः श्रीगुरु-चक्र को ध्यान में रखते हुए श्रीगुरु-पादुका-मन्त्र का जप करे—

१ "ऐं"—मन में इस वीज का उच्चारण करते हुए श्रीगुरु-देव के बगल में वाग्भव-बीज 'ऐं' के स्वरूप को देखे।

२. "ह्रीं"—मन में यह बीज उच्चारण करते हुए श्रीगुरु-देव के ऊपर 'ह्रीं' के स्वरूप का दर्शन करे।

३. "श्रीं"—मन में यह बीज बोलते हुए श्रीगुरु-शक्त्यम्बा (श्रीगुरु-शक्ति अम्बा) के दर्शन करे।

४. 'ह्-स्-ख्-फ्रें'—श्रीगुरु-देव की कटि (कमर) से ऊपर के अङ्ग को देखते हुए मन-ही-मन में इस वीज का उच्चारण करे।

५. 'ह्-स्-क्ष्-म्-ल्-व्-र्-यूं'—श्रीगुरु-देव के कटि के नीचे श्रीचरणों तक के शरीर को देखते हुए इस बीज का उच्चारण मन में करे।

६. 'स्-ह्-ख्-फ्रें'—श्रीगुरु-शक्त्यम्बा माँ की कटि से ऊपर के अङ्ग को देखते हुये मन में इस बीज का उच्चारण करे।

७. स्-ह्-क्ष्-म्-ल्-व्-र्-यीं'—श्रीगुरु-शक्त्यम्बा माँ की कटि से नीचे श्रीचरणों तक शरीर को देखते हुए मन में इस बीज का उच्चारण करे।

८. 'हंसः'—श्रीगुरु-पीठ हंस को देखते हुए मन में उच्चारण करे।

९. 'सोऽहं'—हंस के नीचे नाद को देखते हुए मन में उच्चारण करे।

१०. 'स्हौः'—नाद के नीचे बिन्दु को देखते हुए मन में उच्चारण करे।

११. 'स्हौः'—सहस्र-दल पद्म (हजार पंखुड़ी के कमल) को देखते हुए मन में इस बीज का उच्चारण करे।

१२. 'श्रीगुरु-शक्त्यम्बा-सहित श्री-श्रीनाथ-देव-श्रीपादुकां'—श्रीगुरु - शक्त्यम्बा एवं श्रीगुरु-देव के दर्शन कर 'हंस' को देखते हुए मन में उक्त मन्त्र का उच्चारण करे तथा मन-ही-मन प्रणाम करते हुए, मन में ही 'पूजयामि तर्पयामि नमः' का उच्चारण करे। यहाँ यह स्मरण रक्खे कि प्रणाम करने में सिर नहीं हिलना है।

यह एक बार हुआ। इसी प्रकार जितनी बार जप कर सके, करे। कम-से-कम तीन, पाँच, सात, नौ या ग्यारह बार तो करना ही चाहिए, किन्तु पहले दिन जितनी बार करे, उतनी ही बार प्रति-दिन करना होगा। इस क्रिया के बाद 'योनि-मुद्रा' से श्रीगुरु-देव के दाहिने हाथ में भावना-पूर्वक 'जप-समर्पण' कर देना चाहिए।

प्रातःकाल में श्रीगुरु-चक्र का ध्यान

प्रातः-काल ब्राह्म-मुहूर्त्त में जगकर 'श्रीगुरु-चक्र' का ध्यान उपर्युक्त विधि से करना चाहिए। विशेष बात यह है कि पूर्वोक्त क्रम से ध्यान करने के बाद श्रीगुरु-देव व श्रीगुरु-शक्तचम्बा के दर्शन कर, उनके श्री-चरणों में ध्यान ले जाए। भावना करे कि उनके चरणों के नख प्रकाश से दमक रहे हैं। नखों से प्रकाश की एक उज्ज्वल श्वेत धारा-सी निकल रही है।

फिर, श्री-चरणों के नखों से प्रकाश की धारा निकल कर, मेरे शरीर की रग-रग में हजारों धारा बनकर, शरीर के भीतरी भाग को प्रकाश से सराबोर कर रही है—ऐसी भावना करे। पुनः यह भावना करे कि वह प्रकाश शरीर में समा नहीं पा रहा है, वह शरीर के रोम-रोम से प्रवाहित होकर बाहर निकला आ रहा है।

'मेरा बाह्य शरीर इस बाहर निकलते हुए प्रकाश में घुल-मिल गया है। मैं प्रकाश के एक पुञ्ज-जैसा हो गया हूँ।'—ऐसी भावना करनी चाहिए।

चारों सन्ध्याओं में श्रीगुरु-देव का ध्यान-योग

श्रीगुरु-चक्र के उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि—'कुण्डलिनी' महा-शक्ति श्री-गुरु-शक्तचम्बा का ही रूप है'। चारों सन्ध्याओं में इस महा-शक्ति को मूलाधार, मणिपुर से जगाकर श्रीगुरु-देव के वामाङ्ग में ले जाना ही साधना की अन्तिम सीढ़ी है।

'मूलाधार-चक्र' में काम-वीज 'क्लीं' अवस्थित है, जो स्वयम्भू-लिङ्ग का आधार है अर्थात् जिस पर स्वयम्भू-लिङ्ग प्रतिष्ठित है, वह अग्नि-रूप है।

'प्राण'-वायु (नाक से हम जो साँस लेते हैं) और 'अपान'-वायु (गुदा में रहने-वाली वायु) जब 'मूलाधार-चक्र' में कुम्भक द्वारा भावना-पूर्वक मिलाई जाती हैं, तो इनके वेग से 'क्लीं' बीज में निहित कामाग्नि भड़क उठती है। इस अग्नि से तप-कर मूलाधार में सोई हुई 'कुण्डलिनी' महा-शक्ति जगकर ऐसे सीधी हो जाती है, जैसे डण्डे से प्रताड़ित नागिन कुण्डली छोड़कर झटके से सीधी हो जाती है।

'मणिपुर-चक्र' (नाभि) में भी इसी प्रकार कुण्डलिनी के स्फुरण को देखने का अभ्यास किया जाता है। पूर्ण अभ्यास-क्रम इस प्रकार है—

१. 'प्राण'-वायु को खींच कर भावना द्वारा मूलाधार-चक्र में ले जाय।

२. इस समय ठोढ़ी को छाती से लगाकर, गले की सब नाड़ियों के मुँह बन्द कर 'जालन्धर-बन्ध' लगाए।

३. साथ ही पेट को भीतर खींचकर, पीठ से उसे सटाकर 'उड्डियान बन्ध' लगाए और 'गुदा' को ऊपर की ओर संकुचित कर 'मूल-बन्ध' लगाए ।
४. तब मूलाधार-चक्र में चतुर्दल के बीच 'क्लीं'-बीज से अग्नि की उठती हुई लपटें देखे ।
५. फिर 'कुण्डलिनी' को सीधी रेखा के समान, 'सुषुम्णा' में सीधे ऊपर चढ़कर, 'श्रीगुरु-चक्र' में उसका पहुँचना देखे और श्री गुरु-शक्तयम्बा माँ के रूप में बदल-कर उसे श्रीगुरुदेव के वाम-अङ्ग में विराजती हुई देखे ।

अन्त में श्वास बाहर निकालते हुए, उसे वापिस नीचे आती हुई 'कुण्डलिनी' के आकार में 'स्वयम्भू-लिङ्ग' से लिपटती हुई देखे । श्वास बाहर निकालते समय, जालन्धर-बन्ध, उड्डियान-बन्ध और मूल-बन्ध—तीनों को धीरे-धीरे खोलता जाए । यह ध्यान रहे कि श्वास एकदम झटके से बाहर न निकले ।

ऐसा करने के लिए पहले बाँएँ स्वर से 'प्राण'-वायु को खींचना चाहिए । उसे मूलाधार में रोककर क्रम-संख्या २, ३, ४, ५ के अनुसार देखना चाहिए । फिर दाहिने स्वर से धीरे-धीरे श्वास छोड़नी चाहिए । इसके बाद दाहिने स्वर से साँस खींचे और पूर्वोक्त विधि से सब काम करके बाँयें से उसे बाहर निकाले । तीसरी बार पुनः बाँयें से श्वास खींचे और सब काम करके दाहिने से उसे निकाले ।

ऐसा ९ बार करके, थोड़ा विश्राम करे । इस ध्यान में जो पसीना आये, उसे शरीर में ही रगड़ लेना चाहिए । पसीना योग का तेज है ।

९ बार मूलाधार-चक्र में ध्यान करने के बाद, ९ बार मणिपुर-चक्र में ध्यान करे —

१. 'प्राण'—वायु को खींच कर भावना द्वारा मणिपुर-चक्र में ले जाय ।
२. पहले की तरह जालन्धर-बन्ध, उड्डियान-बन्ध और मूल-बन्ध लगाए ।
३. तब मणिपुर-चक्र में दश-दल के बीच एक त्रिकोण के मध्य 'रं'-बीज से अग्नि की उठती हुई लपटें देखे । कुण्डलिनी (जो यहाँ पाँच फेरे देकर सुप्तावस्था में है) का जगना देखे । फिर सीधे गुरु-चक्र में पहुँचकर श्रीगुरु-शक्तयम्बा के रूप में उसे बदलते हुए देखे । अन्त में श्वास निकालते हुए मूल-बन्ध खोलते हुए देखे कि वह फिर वापिस नीचे उतर कर, मणिपुर में उसी त्रिकोण के मध्य में 'रं' बीज पर पाँच घेरों में कुण्डली मारकर लेट गई है ।

(१)

गुप्तावतार बाबाश्री की कृपा से प्राप्त श्रीविश्वसार-तन्त्र में उद्धृत दुर्लभ

(पूज्य बाबाश्री के अनन्य भक्त स्व० हरकिशन ल० झवेरी द्वारा सङ्कलित)

ऊर्ध्वाम्नायोक्त सिद्ध वीरौघ-गुरु-कवचं

॥ गुरु-ध्यानम् ॥

ध्यायेच्छिरसि शुक्लाब्जे, द्वि - नेत्रं द्वि - भुजं गुरुम् ।
श्वेताम्बर - परीधानं, श्वेत - माल्यानुलेपनम् ॥१
वराभय - करं शान्तं, करुणा - मय - विग्रहम् ।
वामेनोत्पल - धारिण्या, शक्त्यालिङ्गित - विग्रहम् ॥२
स्मेराननं सु - प्रसन्नं, साधकाभीष्ट - सिद्धिदम् ।

॥ कवच-स्तोत्रम् ॥

पर - नाथादि - नाथश्च, ब्रह्म - रन्ध्रे सहस्रके ।
दिव्य - चक्रे च मे पातु, सर्व - विश्वेश्वरेश्वरः ॥१
श्रीनाथः पातु शिरसि, सिद्धि - दले तु श्रीपतिः ।
वाग् - देवी दुर्ग - नाथश्च, दुर्गा दुर्गति - नाशिनी ॥२
षोडशारे सदा पातु, कण्ठ - देशे स्वरे तथा ।
ईश्वरो भैरवी - नाथो, कालमीशान - भैरवः ॥३
द्वादशारे च मे पातु, वीर - भद्रो कालान्त - कृत् ।
दशारे नाभि - देशे च, रुरु - नाथश्च भैरवः ॥४
परात्पर - गुरुर्देवो, चक्र - नाथो सदाऽवतु ।
षड् - दले काम - नेत्रे च, काम - देवो सदाऽवतु ॥५
मत्स्येन्द्रो मत्स्य - नाथश्च, रक्षतु चाण्ड - कोषके ।
गोरक्षश्च[१] वेद - पद्मे, आधारे पातु मे सदा ॥६
चतुरारे भर्तृहरिः गुरुर्मे सर्व - चक्रके ।
शीर्षादौ गुद - पर्यन्तं, पातु नाथो गुरुश्च मे ॥७
पादादि - शीर्ष - पर्यन्तं, विश्व - नाथो विभुर्गुरुः ।
इष्टो इष्ट - पतिर्नाथो, विश्व-सृक् पातु मे सदा ॥८

१.—गोरक्षनाथः ।

हिन्दी ऊर्ध्वाम्नायोक्त श्रीगुरु--कवच

पहले श्रीगुरुदेव का ध्यान करे। यथा—

अपने शिर के श्वेत कमल (सहस्रार पद्म) में दो हाथ, दो नेत्रवाले, श्वेत वस्त्र पहने, श्वेत ही पुष्प-माला और चन्दन धारण किए श्रीगुरुदेव विराजमान हैं। अपने हाथों से 'वर' और 'अभय' देते हुए वे शान्त स्वरूप हैं, उनके सारे शरीर से दया-भाव प्रकट हो रहा है। उनकी शक्ति (श्रीगुरु-पत्नी) हाथ में कमल-पुष्प लिये उनकी बाईं ओर बैठी हुई उनके शरीर का आलिङ्गन किए हुए हैं। श्री गुरुदेव के मुख पर मुस्कान है, वे अति प्रसन्न हैं और साधकों को वांछित सिद्धि प्रदान करने को उद्यत हैं।

उक्त प्रकार श्री गुरुदेव का ध्यान कर उनका मानसिक पूजन करे। तब श्रीगुरुदेव से सम्बन्धित 'कवच-स्तोत्र' का पाठ करे। यथा—

ब्रह्म-रन्ध्र में स्थित सहस्र-दल-पद्म के दिव्य चक्र में समस्त विश्वों के स्वामी पर-नाथ एवं आदि-नाथ मेरी रक्षा करें ॥१

श्री-नाथ शिर में और श्री-पति सिद्धि-दल में रक्षा करें। वाग्-देवी, दुर्ग-नाथ और दुर्गति-नाशिनी दुर्गा सदा कण्ठ-स्थान के षोडशार-चक्र में और स्वर में तथा ईश्वर, भैरवी-नाथ, नाथ, ईशान भैरव काल की रक्षा करें ॥२-३

द्वादशार-चक्र में कालान्त-कृत वीर-भद्र और नाभि-स्थान में रुरु-नाथ भैरव मेरी रक्षा करें ॥४

चक्र-नाथ परात्पर गुरुदेव सदा रक्षा करें। षड्-दल चक्र में और काम-नेत्रों में सदा काम-देव रक्षा करें ॥५

अण्ड-कोषों में मत्स्य-नाथ मत्स्येन्द्र रक्षा करें। गोरक्षनाथ मूलाधार के चतुर्दल-चक्र में सदा रक्षा करें ॥६

चतुर्दल चक्र में और सिर से लेकर गुदा तक के सभी चक्रों में मेरे गुरुदेव श्री भर्तृहरिनाथ मेरी रक्षा करें ॥७

पैरों से सिर तक विश्व-नाथ विष्णु, इष्ट-देव, इष्ट-पति, विश्व-सृक्, गुरु-नाथ सदा मेरी रक्षा करें ॥८
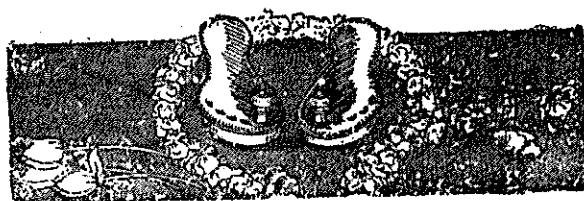
(२)

पुरश्चरण-रसोल्लासे ईश्वर-देवी-सम्वादे

श्रीगुरु-कवचं

पूर्व-पीठिका

।। श्रीईश्वर उवाच ।।

श्रृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि, गुह्याद्-गुह्य-तरं महत् ।
लोकोपकारकं प्रश्नं, न केनापि कृतं पुरा ।।
अद्य प्रभृति कस्यापि, न ख्यातं कवचं मया ।
देशिकाः बहवः सन्ति, मन्त्र - साधन - तत्पराः ।।
न तेषां जायते सिद्धिः, मन्त्रैर्वा चक्र - पूजनैः ।
गुरोर्विधानं कवचमज्ञात्वा क्रियते जपः ।
वृथाश्रमो भवेत् तस्य, न सिद्धिर्मन्त्र - पूजनैः ।।
गुरु-पादं पुरस्कृत्य, प्राप्यते कवचं शुभम् ।
तदा मन्त्रस्य यन्त्रस्य, सिद्धिर्भवति तत्-क्षणात् ।
सु-गोप्यं तु प्रजप्तव्यं, न वक्तव्यं वरानने ।।

।। सविधि श्रीगुरु-कवच-स्तोत्रम् ।।

विनियोगः—ॐ नमोऽस्य श्रीगुरु-कवच-नाम-मन्त्रस्य परम-ब्रह्म ऋषिः, सर्व-वेदानुज्ञो देव-देवो श्रीआदि-शिवः देवता, नमो ह्सौं हंसः ह-स-क्ष-म-ल-व-र-यूं सोऽहं हंसः बीजं, स-ह-क्ष-म-ल-व-र-यीं शक्तिः, हंसः सोऽहं कीलकं, समस्त-श्रीगुरु-मण्डल - प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यासः—श्रीपरम-ब्रह्मर्षये नमः शिरसि । सर्व-वेदानुज्ञ-देव-देव श्रीआदि-शिव-देवतायै नमः हृदि । नमः ह्सौं हंसः ह-स-क्ष-म-ल-व-र-यूं सोऽहं हंसः बीजाय नमः गुह्ये । स-ह-क्ष-म-ल-व-र-यीं शक्तये नमः नाभौ । हंसः सोऽहं कीलकाय नमः पादयोः । समस्त-श्रीगुरु-मण्डल-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

षडङ्ग-न्यास	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ह्सां	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ह्सीं	तर्जनीभ्यां नमः	शिरसे स्वाहा
ह्सूं	मध्यमाभ्यां नमः	शिखायै वषट्
ह्सैं	अनामिकाभ्यां नमः	कवचाय हुं
ह्सौं	कनिष्ठाभ्यां नमः	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ह्सः	करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः	अस्त्राय फट्

ध्यान--

श्रीसिद्ध-मानव-मुखा गुरवः स्वरूपं, संसार-दाह-शमनं द्वि-भुजं त्रि-नेत्रम् ।
वामाङ्ग-शक्ति-सकलाभरणैर्विभूषं, ध्यायेज्जपेत् सकल-सिद्धि-फल-प्रदं च ।।

मानस-पूजन---

लं पृथिव्यात्मकं गन्ध-तन्मात्र-प्रकृत्यात्मकं गन्धं स-शक्तिकाय श्रीगुरवे समर्पयामि नमः,
हं आकाशात्मकं शब्द-तन्मात्र-प्रकृत्यात्मकं पुष्पं स-शक्तिकाय श्रीगुरवे समर्पयामि नमः,
यं वाय्वात्मकं स्पर्श-तन्मात्र-प्रकृत्यात्मकं धूपं स-शक्तिकाय श्रीगुरवे घ्रापयामि नमः,
रं वह्न्यात्मकं रूप-तन्मात्र-प्रकृत्यात्मकं दीपं स-शक्तिकाय श्रीगुरवे समर्पयामि नमः,
वं अमृतात्मकं रस-तन्मात्र-प्रकृत्यात्मकं नैवेद्यं स-शक्तिकाय श्रीगुरवे समर्पयामि नमः,
सं सर्वात्मिकां ताम्बूलादि-सर्वोपचार-पूजां स-शक्तिकाय श्रीगुरवे समर्पयामि नमः ।

।। कवच-स्तोत्रम् ।।

ॐ नमः प्रकाशानन्द-नाथः तु, शिखायां पातु मे सदा ।
पर-शिवानन्द-नाथः, शिरो मे रक्षयेत् सदा ।।१
पर-शक्ति-दिव्या-नन्द -नाथो भाले च रक्षतु ।
कामेश्वरानन्द,-नाथो, मुखं रक्षतु सर्व-धृक् ।।२
दिव्यौघो मस्तकं देवि ! पातु सर्व-शिरः सदा ।
कण्ठादि-नाभि-पर्यन्तं, सिद्धौघा गुरवः प्रिये ।।३
भोगानन्द-नाथ गुरुः, पातु दक्षिण-बाहुकम् ।
समयानन्द-नाथश्च, सन्ततं हृदयेऽवतु ।।४
सहजानन्द-नाथश्च, कटिं नाभिं च रक्षतु ।
एष स्थानेषु सिद्धौघाः, रक्षन्तु गुरवः सदा ।।५
अधरे मानवौघाश्च, गुरवः कुल-नायिके !
गगनानन्द-नाथश्च, गुल्फयोः पातु सर्वदा ।।६
नीलौघानन्द-नाथश्च, रक्षयेत् पाद-पृष्ठतः ।
स्वात्मानन्द-नाथ-गुरुः, पादांगुलीश्च रक्षतु ।।७
कन्दोलानन्द-नाथश्च, रक्षेत् पाद-तले सदा ।
इत्येवं मानवौघाश्च, न्यसेन्नाभ्यादि-पादयोः ।।८
गुरुर्मे रक्षयेदुर्व्यां, सलिले परमो गुरुः ।
परापर-गुरुर्वह्नौ, रक्षयेत् शिव-वल्लभे ।।९

परमेष्ठी - गुरुश्चैव, रक्षयेत् वायु - मण्डले ।
शिवादि - गुरवः साक्षात्, आकाशे रक्षयेत् सदा ।।१०
इन्द्रो गुरुः पातु पूर्वे, आग्नेयां गुरुरग्नयः ।
दक्षे यमो गुरुः पातु, नैऋत्यां निऋतिर्गुरुः ।।११
वरुणो गुरुः पश्चिमे, वायव्यां मारुतो गुरुः ।
उत्तरे धनदः पातु, ऐशान्यामीश्वरो गुरुः ।।१२
ऊर्ध्वं पातु गुरुर्ब्रह्मा, अनन्तो गुरुरप्यधः ।
एवं दश - दिशः पान्तु, इन्द्रादि - गुरवः क्रमात् ।।१३
शिरसः पाद - पर्यन्तं, पान्तु दिव्यौघ - सिद्धयः ।
मानवौघाश्च गुरवो, व्यापकं पान्तु सर्वदा ।।१४
सर्वत्र गुरु - रूपेण, संरक्षेत् साधकोत्तमम् ।
आत्मानं गुरु - रूपं च, ध्यायेन् मन्त्रं सदा बुधः ।।१५

फल-श्रुतिः

इत्येवं गुरु - कवचं, ब्रह्म - लोकेऽपि दुर्लभम् ।
तव प्रीत्या मया ख्यातं, न कस्य कथितं प्रिये ।।१
पूजा - काले पठेद् यस्तु, जप - काले विशेषतः ।
त्रैलोक्य - दुर्लभं देवि ! भुक्ति - मुक्ति - फल-प्रदम् ।।२
सर्व - मन्त्र - फलं तस्य, सर्व - यन्त्र - फलं तथा ।
सर्व - तीर्थ - फलं देवि ! यः पठेत् कवचं गुरोः ।।३
अष्ट - गन्धेन भूर्जे च, लिख्यते चक्र - संयुतम् ।
कवचं गुरु - पङ्क्तेस्तु, भक्त्या च शुभ - वासरे ।।४
पूजयेत् धूप - दीपाद्यैः, सुधाभिः सित - संयुतैः ।
तर्पयेत् गुरु - मन्त्रेण, साधकः शुद्ध - चेतसा ।।५
धारयेत् कवचं देवि ! इह भूत - भयापहम् ।
पठेन्मन्त्री त्रिकालं हि, स मुक्तो भव-बन्धनात् ।
एवं कवचं परमं, दिव्य - सिद्धौघ - कलावान् ।।६

हिन्दी श्रीगुरु-कवच

॥ पूर्व-पीठिका ॥

श्री ईश्वर बोले-– हे देवि ! संसार के लिए कल्याणकारी प्रश्न तुमने पूछा है, जिसे पहले किसी ने नहीं पूछा। अत्यन्त गोप्य से भी गोपनीय उसे मैं कहूँगा। यह 'कवच' आज तक मैंने किसी से नहीं कहा है। मन्त्र-साधना में बहुत से साधक तत्पर रहते हैं किन्तु उन्हें मन्त्रों या चक्र-पूजनों के द्वारा सिद्धि नहीं मिलती। गुरु के विधान-रूप कवच को बिना जाने जो जप करता है, उसका परिश्रम व्यर्थ होता है। मन्त्र और पूजनों से सिद्धि नहीं मिलती। गुरु-चरणों को आगे कर कल्याणकारी कवच को जब साधक प्राप्त करता है, तब उसे मन्त्र और यन्त्र की सिद्धि मिल जाती है। हे सुमुखि ! अत्यन्त गोपनीय भाव से इसका जप करना चाहिए, किसी से बताना नहीं चाहिए।

॥ विधि-सहित श्रीगुरु-कवच-स्तोत्र ॥

पृष्ठ १६–२० में प्रकाशित विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, कर-न्यास और अङ्ग-न्यास कर ध्यान करे–

मानवीय मुखवाले सिद्ध-गुरुओं का स्वरूप द्वि-भुज और द्वि-नेत्र है, जो संसार के दुःखों को शान्त करता है। समस्त अलङ्कारों से सज्जित शक्ति द्वारा उस स्वरूप का बाँयाँ अङ्ग सुशोभित है। ऐसे स्वरूप का ध्यान कर जप करने से वह सभी सिद्धियों का फल प्रदान करता है।

इस प्रकार ध्यान कर पृष्ठ २० पर उल्लिखित मानस पूजन कर कवच-स्तोत्र का पाठ करे—

॥ कवच-स्तोत्र ॥

ॐ नमस्कार। प्रकाशानन्दनाथ सदा मेरी शिखा की रक्षा करें, पर-शिवानन्दनाथ मेरे शिर की सदा रक्षा करें ॥१॥ पर-शक्ति-दिव्यानन्दनाथ भाल (कपाल) की रक्षा करें और सबको धारण करने-वाले कामेश्वरानन्दनाथ मुख की रक्षा करें ॥२॥ हे देवि ! दिव्यौघ मस्तक और सारे शिर की रक्षा करें। हे प्रिये ! सिद्धौघ गुरु कण्ठ से लेकर नाभि तक रक्षा करें ॥३॥ भोगानन्दनाथ गुरु दाईं भुजा की रक्षा करें और समयानन्दनाथ निरन्तर हृदय की रक्षा करें ॥४॥ सहजानन्दनाथ कटि (कमर) और नाभि की रक्षा करें। इन स्थानों में सिद्धौघ गुरु सदा रक्षा करें ॥५॥ हे कुल-नायिके ! अधर में मानवौघ गुरु और दोनों गुल्फों (घुटनों) में गगनानन्दनाथ सदा रक्षा करें ॥६॥ नीलौघानन्दनाथ पैर के पिछले भाग की रक्षा करें और स्वात्मानन्दनाथ गुरु पैर की अँगुलियों की रक्षा करें ॥७॥ कन्दोलानन्द-नाथ सदा पैर के तलवों की रक्षा करें। इस प्रकार मानवौघ गुरुओं का न्यास (स्थापन) नाभि से पैरों तक करे ॥८॥ पृथ्वी पर मेरे गुरु रक्षा करें, जल में परम गुरु और हे शिव-प्रिये ! अग्नि में परापर गुरु रक्षा करें ॥९॥ वायु-मण्डल में परमेष्ठी-गुरु रक्षा करें और साक्षात् शिवादि गुरु सदा आकाश में रक्षा करें ॥१०॥

गुरु इन्द्र पूर्व में रक्षा करें, आग्नेय-कोण में गुरु अग्नियाँ, दाईं ओर गुरु यम और नैर्ऋत-कोण में निर्ऋति रक्षा करें।११। पश्चिम में गुरुण वरुण (जल-देव), वायव्य कोण में गुरु मारुत (पवन देव), उत्तर में धनद (कुबेर) और ऐशान कोण में गुरु ईश्वर रक्षा करें ॥१२॥ ऊपर गुरु ब्रह्मा और नीचे गुरु अनन्त रक्षा करें। इस प्रकार दसों दिशाओं की रक्षा क्रमशः इन्द्रादि गुरु करें ॥१३॥ शिर से पैर तक दिव्यौघ की सिद्धियाँ रक्षा करें और मानवौघ गुरु सदैव व्यापक रूप से रक्षा करें ॥१४॥ सभी स्थानों में गुरु-रूप से उत्तम साधक की रक्षा करें। बुद्धिमान् साधक को सदैव आत्मा को और मन्त्र को गुरु-रूप में ध्यान करना चाहिए ॥१५॥

(शेष पृष्ठ २४ पर)

(२)

ब्रह्म-यामले नारद-ब्रह्म-सम्वादे

श्रीमद्-गुरु-कवचम्

॥ नारद उवाच ॥

ब्रह्मन् ! गुरोर्मनु - स्तोत्रं, यथावदवधारितम् ।
कवच - श्रवणे श्रद्धा, साम्प्रतं कथ्यतां मम ॥१

॥ ब्रह्मोवाच ॥

श्रीगुरोः कवचं गुह्यं, वर्ण्यमानं निबोध मे ।
नाभक्ताय प्रदातव्यं, देयं भक्ति - मते सदा ॥२

विनियोग—ॐ अस्य श्रीगुरु-कवचस्य श्री ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, त्रि-देवात्मा अमुक-नाम-श्रीगुरुः देवता, अमुक-नाम-श्रीगुरुदेव-प्रीतये पाठे विनियोगः ।[*]

ऋष्यादि-न्यासः—श्रीब्रह्मर्षये नमः शिरसि । अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे । त्रि - देवात्मा अमुक-नाम-श्रीगुरुदेवाय नमः हृदि । अमुक-नाम-श्रीगुरुदेव-प्रीतये पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

॥ कवच-स्तोत्रम् ॥

ॐ शिरो मे सर्वदा पातु, गुरुः सर्वाङ्ग - सुन्दरः ।
उद्यद्-भाल - ललाटं मे, कृपा - दृष्टिर्दृशौ मम ॥१
मन्द-स्मितो मुखं पातु, श्रुती च मधुरं वचः ।
हृदयं पातु मन्त्रोक्तिर्वराभय - धरः करौ ॥२
गुरु - पद्मासनं पातु, नाभ्यादि - चरणान्तिकम् ।
गुरु - पाद - नख - ज्योत्स्ना, सर्वाङ्गं सर्वदाऽवतु ॥३
वाग्-बीजं मे सदा पातु, कामाद्यन्तांश्च खेचरी ।
आनन्द-भैरवः पातु, सदैवानन्द - मन्दिरम् ॥४
आनन्द - भैरवी पातु, ममानन्दं सदैव सा ।
हिंस्रेभ्यः सर्वदा पातु, श्रीप्रासाद - परो मनुः ॥५
परा-प्रासाद - मन्त्रस्तु, पातु नित्यं विपद् - दशाम् ।
हंसः पीठं पातु चोर्ध्वं, सर्व - दिक्षु सदाऽवतु ॥६
कुलं तु गुरवः पान्तु, पात्वधः कमलासनः ।

**[*] श्रीगुरोः कवचस्यास्य, ब्रह्मर्षिः परिकीर्तितः ।
छन्दोऽनुष्टुप् देवता च, त्रि-देवात्मा गुरुः स्वयम् ॥**

ज्ञानं पातु च दिव्यौघा, इच्छां सिद्धौघ - संज्ञकः ।
मानवौघाः क्रियां पान्तु, श्रीगुरुः सर्वदाऽवतु ।।७

फल-श्रुति

ॐ इतीदं कवचं नित्यं, प्रातः - कृत्यावसानके ।
यः पठेन् मानवो भक्त्या, त्रैलोक्य - विजयी भवेत् ।।१
मन्त्र - सिद्धिर्भवेत् तस्य, देवता च प्रसीदति ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं, नात्र कार्या विचारणा ।।२
गुर्वभिधानं कवचमज्ञात्वा क्रियते जपः ।
वृथा श्रमो भवेत् तस्य, न सिद्धिर्मन्त्र - पूजने ।।३
गुरु - पादं पुरस्कृत्य, कवचं पठ्यते शुभम् ।
तदा मन्त्रस्य यन्त्रस्य, सिद्धिर्भवति नान्यथा ।।४
गुरु-गोप्यं च कर्त्तव्यं, न वक्तव्यं कदाचन ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं, न प्रकाश्यं कदाचन ।।५
दातव्यं भक्ति - युक्ताय, कुलीनाय विशेषतः ।
त्रैलोक्य - दुर्लभं चैतद्, भुक्ति-मुक्ति - फल-प्रदम् ।।६
सर्व-तीर्थ - फलं येन, पठ्यते कवचं गुरोः ।
इति ते कथितं पुत्र ! सावधानोऽवधारय ।।७

(पृष्ठ २२ का शेषांश)

।। फल-श्रुति ।।

यह 'गुरु कवच' ब्रह्म-लोक में भी दुर्लभ है। तुम्हारे प्रेम से मैंने इसे कहा है। हे प्रिये ! अन्य किसी से नहीं कहा है ।।१।। पूजा के समय में, विशेष कर जप करते समय, हे देवि ! तीनों लोकों में दुर्लभ यह कवच भोग और मोक्ष-रूपी फल प्रदान करता है ।।२।। हे देवि ! जो गुरु के 'कवच' का पाठ करताहै, उसे सभी मन्त्रों का, सभी यन्त्रों का और सभी तीर्थों का पूरा फल प्राप्त होता है ।।३।। किसी शुभ दिन में, भोज-पत्र पर, अष्ट-गन्ध से चक्र के सहित कवच को भक्ति-पूर्वक लिखे और धूप-दीपादि से उसकी पूजा कर गुरु-मन्त्र द्वारा मिश्री-युक्त सुधा द्वारा साधक पवित्र मन से तर्पण करे। फिर उसे धारण करे, तो हे देवि ! इस संसार में वह भूत-भय को दूर करता है। मन्त्र-साधक तीनों कालों (प्रातः, मध्याह्न, सायं) में कवच का पाठ करे, तो वह संसार के बन्धन से छूट जाता है। इस प्रकार यह श्रेष्ठ 'कवच' दिव्य-सिद्धौघों की कला से समन्वित है ।।४-६।।

हिन्दी श्रीमद्-गुरु-कवच

॥ पूर्व-पीठिका ॥

श्री नारद बोले—हे ब्रह्मन् ! गुरु-मन्त्र के स्तोत्र को यथा-विधि समझ लिया है। अब कवच सुनने की मेरी श्रद्धा है, उसे कहिए।

श्री ब्रह्मा ने कहा—श्रीगुरु का गोपनीय कवच कहता हूँ, मुझसे सुनो। भक्ति-हीन को इसे नहीं देना चाहिए, सदैव भक्ति-युक्त को ही यह देने योग्य है।

॥ सविधि श्रीमद्-गुरु-कवच-स्तोत्र ॥

पहले पृष्ठ २३ के अनुसार विनियोग और ऋष्यादि-न्यास कर लें, तब कवच-स्तोत्र का पाठ करें। यथा—

सर्वाङ्ग-सुन्दर गुरुदेव सदैव मेरे शिर, भाल और ललाट की रक्षा करें तथा उनकी कृपा-दृष्टि मेरे दोनों नेत्रों की रक्षा करे ॥१

गुरुदेव की मन्द मुस्कान मेरे मुख की और उनकी मधुर वाणी मेरे कानों की रक्षा करे। उनके मन्त्रात्मक वचन मेरे हृदय की और उनके वर-अभय धारण करनेवाले कर-कमल मेरे हाथों की रक्षा करें ॥२

गुरुदेव का पद्मासन मेरी नाभि से चरणों तक के शरीर की रक्षा करे और गुरुदेव के चरणों की नख-चन्द्रिका सदैव मेरे सारे अङ्गों की रक्षा करे ॥३

वाग्-बीज (ऐं) सदा कामादि से खेचरी तक मेरी रक्षा करे। आनन्द-भैरव मेरे आनन्द-मन्दिर की रक्षा करें ॥४

आनन्द-भैरवी सदा ही मेरे आनन्द की रक्षा करें और श्रीप्रासाद-परा मन्त्र सदैव हिंसक प्राणियों से मेरी रक्षा करे ॥५

श्री परा-प्रासाद मन्त्र प्रति-दिन विपत्ति की दशा से मेरी रक्षा करे। हंस-पीठ ऊर्ध्व प्रदेश में और सभी दिशाओं में सदा मेरी रक्षा करे ॥६

गुरु लोग मेरे कुल की रक्षा करें, कमलासन अधो प्रदेश में मेरी रक्षा करे। दिव्यौघ गुरु मेरे ज्ञान की, सिद्धौघ नामक गुरु मेरी इच्छा की तथा मानवौघ गुरु मेरी क्रिया की रक्षा करें, श्री गुरुदेव सदैव मेरी रक्षा करें ॥७

॥ फल-श्रुति ॥

इस 'कवच' को जो मनुष्य भक्ति-पूर्वक प्रतिदिन प्रातःकृत्य के अन्त में पढ़ता है, वह तीनों लोकों में विजयी होता है ॥१॥ उसे मन्त्र की सिद्धि मिलती है और देवता उस पर प्रसन्न होता है। यह सत्य है, सत्य है, बारम्बार सत्य है, इसमें कुछ भी विचार करने की बात नहीं है ॥२॥ गुरु-नामक 'कवच' को जाने बिना जो जप करता है, उसका परिश्रम व्यर्थ होता है। उसे मन्त्र-पूजन में सिद्धि नहीं मिलती ॥३॥ गुरु-चरणों को आगे करके कल्याणकारी कवच का पाठ किया जाता है। तब मन्त्र-यन्त्र की सिद्धि होती है, अन्यथा नहीं ॥४॥ गुरु को गोपनीय रखना चाहिए, कभी उनको प्रकट नहीं करना चाहिए। जिस किसी को 'गुरु-कवच' न देना चाहिए और न ही उसे प्रकाशित करना चाहिए ॥५॥ भक्ति से युक्त, विशेषकर कुलीन व्यक्ति को ही, तीनों लोकों में दुर्लभ, भोग-मोक्ष को फल-रूप में देनेवाले इस 'कवच-स्तोत्र' को देना चाहिए ॥६॥ गुरुदेव के इस कवच को जो पढ़ता है, उसे सभी तीर्थ-स्थानों का फल मिल जाता है। तुमसे यह सब कहा है, सावधानी से इसे हृदयङ्गम करो ॥७॥

(४)

कङ्काल-मालिनी-तन्त्रे · ईश्वर-देवी-सम्वादे

श्रीगुरु-कवचम्

॥ पूर्व-पीठिका ॥

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

भूत - नाथ ! महा - देव ! कवचं तस्य मे वद ।
गुरु-देवस्य देवेश ! साक्षात् ब्रह्म - स्वरूपिणः ॥१

॥ श्री ईश्वर उवाच ॥

अथ ते कथयामीशे ! कवचं मोक्ष - दायकम् ।
यस्य ज्ञानं विना देवि ! न सिद्धिर्न च सद्-गतिः ॥२
ब्रह्मादयोऽपि गिरिजे ! सर्वत्र जयिनः स्मृताः ।
अस्य प्रसादात् सकला, वेदागम - पुरःसराः ॥३

॥ सविधि श्रीगुरु-कवचम् ॥

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीगुरु-कवचस्य श्रीविष्णुः ऋषिः, विराट्-छन्दः, गुरुदेव स्वयं शिवः देवता, चतुर्वर्गे ज्ञान-मार्गे पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यासः—श्रीविष्णु-ऋषये नमः शिरसि । विराट्-छन्दसे नमः मुखे । गुरुदेव-स्वयं-शिव-देवतायै नमः हृदि । चतुर्वर्गे ज्ञान-मार्गे पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

सहस्रारे महा - पद्मे, कर्पूर - धवलो गुरुः ।
वामोरु - स्थित[१] -शक्तिर्यः सर्वत्र[२] परि - रक्षतु ॥१
परमाख्यो गुरुः पातु, शिरसं मम वल्लभे !
परा-पराख्यो नासां मे, परमेष्ठी[३] मुखं सदा ॥२
कण्ठं मम सदा पातु, भैरवानन्द - नाथकः[४] ।
बाहौ[५] द्वौ सनकानन्दः, कुमारानन्द एव च[६] ॥३
वशिष्ठानन्द - नाथश्च, हृदयं पातु सर्वदा ।
क्रोधानन्दः कटिं पातु, सुखानन्दः पदं मम ॥४
ध्यानानन्दश्च सर्वाङ्गं, बोधानन्दश्च कानने ।
सर्वत्र गुरवः पान्तु, सर्वे ईश्वर - रूपिणः ॥५

॥ फल-श्रुति ॥

इति ते कथितं भद्रे ! कवचं परमं शिवे !
भक्ति - हीने दुराचारे, दद्यान्मृत्युमवाप्नुयात् ॥१

अस्यैव पठनाद् देवि ! धारणात् श्रवणात् प्रिये !
जायते मन्त्र-सिद्धिश्च [7] किमन्यत् कथयामि ते ।।२
कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ, शिखायां वीर - वन्दिते ।
धारणान्नाशयेत् पापं, गङ्गायां कल्मषं[8] यथा ।।३
इदं कवचमज्ञात्वा, यदि मन्त्रं जपेत् प्रिये !
तत् सर्वं निष्फलं कृत्वा, गुरुर्याति सुनिश्चितम् ।
शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता, गुरौ रुष्टौ न कश्चन ।।४

पाठान्तर—[1] गत, [2] सर्वतः, [3] परमेष्ठिः, [4] प्रह्लादानन्द-नाथकः, [5] बाहू, [6] नाथकः, [7] मन्त्राः सिद्धाश्च जायते, [8] कलुषं ।

हिन्दी श्रीगुरु-कवच

श्री देवी बोलीं— हे भूत-नाथ, महादेव, देवेश्वर ! साक्षात् ब्रह्म-स्वरूप उन गुरुदेव का कव मुझसे कहिए ।।१।।

श्री ईश्वर ने कहा—हे देवि, ईश्वरि ! अब मैं तुमसे मोक्ष-प्रद कवच को कहता हूँ, जिसे जा बिना न सिद्धि मिलती है और न सद्-गति ।।२ ।। हे गिरिजे ! इसके प्रसाद से ही समस्त तन्त्र-शास्त्र क आगे रखनेवाले ब्रह्मा आदि भी सभी स्थानों में विजयी माने जाते हैं ।।३।।

।। सविधि श्रीगुरु-कवच ।।

पहले पृष्ठ २६ के अनुसार विनियोग एवं ऋष्यादि-न्यास करे । तब कवच-स्तोत्र का पाठ करे

सहस्रार के महान् पद्म में कपूर के समान उज्ज्वल वर्णवाले गुरुदेव, जिनकी जाँघ से सटीं उनकी शक्ति (धर्म-पत्नी) विराजमाना हैं, सभी स्थानों में मेरी रक्षा करें ।। १ ।। हे प्रिये ! 'परम' नामक मेरे सिर की, 'परापर' नामक मेरी नासिका की और 'परमेष्ठी' मेरे मुख की सदा रक्षा करें ।। २ ।। भैरवानन्दनाथ मेरे कण्ठ की और सनकानन्दनाथ तथा कुमारानन्दनाथ मेरी दोनों भुजाओं की सद रक्षा करें ।। ३ ।। वशिष्ठानन्दनाथ सदैव मेरे हृदय की रक्षा करें और क्रोधानन्दनाथ मेरी कटि (कमर) की तथा सुखानन्दनाथ मेरे पैरों की रक्षा करें ।। ४ ।। ध्यानानन्दनाथ मेरे सारे शरीर की, बोधानन्दनाथ वन-उपवन में, और ईश्वर-स्वरूप सभी गुरु समस्त स्थानों में मेरी रक्षा करें ।। ५ ।।

।। फल-श्रुति ।।

हे भद्रे, शिवे ! यह श्रेष्ठ 'कवच' कहा है । भक्ति-हीन, दुराचारी व्यक्ति को इसे बताने से मृत्यु हो जाती है ।।१।। हे प्रिये, देवि ! इसका पाठ या श्रवण करने से या इसे धारण करने से मन्त्र सिद्ध होते हैं । और तुमसे क्या कहूँ ? ।।२ ।। हे वीर-वन्दिते ! कण्ठ में, दाईं भुजा में या शिखा में इसे रखने से यह पापों को उसी प्रकार नष्ट करता है, जैसे गङ्गा में पातक नष्ट हो जाते हैं ।।३।। हे प्रिये ! इस कवच को जाने बिना यदि कोई मन्त्र का जप करता है, तो वह व्यर्थ होता है और गुरुदेव उसे त्यागकर चले जाते हैं, यह सर्वथा निश्चित है । शिव के रुष्ट होने पर गुरुदेव रक्षा करते हैं, किन्तु गुरु के रुष्ट होने पर कोई रक्षा नहीं करता ।।४।।

(९)

ब्रह्म-यामले पार्वती-ईश्वर-सम्वादे

समस्त-मंगलं नाम स्त्री-गुरु-कवचम्

।। पूर्व-पीठिका ।।

।। श्रीदेव्युवाच ।।

इदानीं स्त्री-गुरोः तु, कवचं मयि कथ्यताम् ।
यस्य विज्ञान-मात्रेण, पुनर्जन्म न विद्यते ।।

।। श्री शिव उवाच ।।

स्त्री-गुरोश्चापि देवेशि ! कवचं शृणु सादरम् ।
यस्य श्रवण-मात्रेण, वागीश-समतां व्रजेत् ।।

।। सविधि समस्त-मङ्गल नाम स्त्री-गुरु-कवचम् ।।

विनियोगः—ॐ अस्य स्त्री-गुरोः कवचस्य श्री सदा-शिव ऋषिः, अमुक-नामा स्त्री-गुरुः देवता, अमुक-नामा स्त्री-गुरु-देवता-प्रीतये विनियोगः । [※]

ऋष्यादि-न्यासः—श्रीसदा-शिव-ऋषये नमः शिरसि । अमुक-नामा-स्त्री-गुरु-देवतायै नमः हृदि । अमुक-नामा-स्त्री-गुरु-देवता-प्रीतये पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

।। ईश्वर उवाच ।।

ॐ क्लीं बीजं मे शिरः पातु, तदाख्या च[१] ललाटकम् ।
क्लीं बीजं चक्षुषोः पातु, सर्वाङ्गं मे सदा-शिवः[२] ।।१
ऐं बीजं मे मुखं पातु, ह्रीं जिह्वां[३] परि-रक्षतु ।
श्रीं-बीजं स्कन्ध-देशं मे, हसखफ्रें[४] भुज-द्वयम् ।।२
ह-कारः कण्ठ-देशं मे, स-कारः षोडशं दलम् ।
क्ष-वर्णस्तदधः पातु, ल-कारो हृदयं मम[५] ।।३
व-कारः पृष्ठ-देशं च, र-कारो[६] दक्ष-पार्श्वकम् ।
यूङ्कारो[७] वाम-पार्श्वं[८] च, सकारो[९] मेरुमेव च ।।४
हकारो मे दक्ष-भुजं, क्षकारो वाम-हस्तकम् । [※]
मकारश्चांगुलि[१०] पातु, लकारः पातु मे नखम्[११] ।।५
वकारो[१२] मे नितम्बं च, रकारो[१३] जठरं मम ।
यीङ्कारः[१४] पाद-युगलं, ह्सौः सर्वाङ्गकेऽवतु[१५] ।।६

[※] स्त्री-गुरोः कवचस्य सदा-शिव ऋषिः स्मृतः ।
तदाख्या देवता प्रोक्ता, चतुर्वर्ग-फल-प्रदा ।।

ह्सौंलिङ्गं च लोमानि,[१६] केशं च परि - रक्षतु ।
ऐं बीजं पातु पूर्वे मे,[१७] ह्रीं बीजं दक्षिणेऽवतु ।।७
श्रीं बीजं पश्चिमे पातु, उत्तरे भूत- सम्भवम् ।
ऐं[१८] पातु चाग्नि-कोणे च, वेदाद्या[१९] नैर्ऋतेऽवतु ।।८
देव्यम्बा पातु वायव्यां, शम्भोः श्रीपादुकां तथा ।
पूजयामि तथा चोर्ध्वं, नमश्चाधः सदाऽवतु ॐ ।।९

।। फल-श्रुति ।।

इति ते कथितं, कान्ते ! कवचं परमाद्भुतम् ।
गुरु-मन्त्रं जपित्वा तु, कवचं प्रपठेद् यदि ।
स सिद्धः स गणः सोऽपि, शिवः साक्षान्न संशयः ।।१
पूजा-काले पठेद् यस्तु, कवचं मन्त्र - विग्रहम् ।
पूजा-फलं भवेत् तस्य, सत्यं सत्यं सुरेश्वरि !
त्रि-सन्ध्यं यः पठेद् देवि ! स सिद्धो नात्र संशयः ।।२
भूर्जे विलिख्य गुटिकां, स्वर्णस्थां धारयेद् यदि ।
तस्य दर्शन-मात्रेण, वादिनो निष्प्रभां गताः ।।३
विवादे जयमाप्नोति, रणे च नैर्ऋतेरिव[२०] ।
सभायां जयमाप्नोति, मम तुल्यो न संशयः ।।४
सहस्रारे भावयन् यः,[२१] त्रि-सन्ध्यं प्रपठेद् यदि ।
स एव सिद्ध[२२] - लोकेशो, निर्वाण - पदमीयते[२३] ।।५
समस्त - मङ्गलं नाम, कवचं परमाद्भुतम् ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं, न प्रकाश्यं कदाचन ।।६
देयं शिष्याय शान्ताय, चान्यथा विफलं[२४] भवेत् ।
अभक्तेभ्यस्तु[२५] देवेशि ! पुत्रेभ्योऽपि न दर्शयेत् ।।७
इदं कवचमज्ञात्वा दश-विद्यां च यो जपेत्[२६] ।
स नाप्नोति फलं तस्य, परे च नरकं व्रजेत् ।।८

ऊपर प्रकाशित 'स्त्री-गुरु-कवच' बृहत् तन्त्रसार से उद्धृत है । 'मातृका-भेद तन्त्र' में भी यह कवच दिया है । उसके अनुसार अनेक पाठान्तर हैं ।

पाठान्तर निम्न प्रकार हैं—

पाठान्तर—१ तदाख्यातं, २ सदाऽवतु, ३ जङ्घां, ४ वाग्भवं मे,
५ हकारं मे दक्ष-भुजं, क्षकारं वाम-हस्तकम् ।
क्षसर्णौ तदधः पातु, लकारं हृदयं मम ।।३
६ रकारं, ७ जूं-कारं, ८ तु, ९ सकारं
[※] यह पंक्ति 'मातृका-भेद तन्त्र' में नहीं है ।
१० मकारं चांगुलीः, ११ लकारं मे नखोपरि, १२ वकारं, १३ रकारं, १४ यीःकारः, १५ सर्वाङ्ग-मेव तु, १६ लोमं च, १७ तु, १८ श्रीं, १९ तदाख्या, २० निऋतिरिव, २१ भावयस्तां, २२ सिद्धो, २३ पदमीहते, २४ पतनं, २५ अभक्तेभ्योऽपि, २६ विद्यां चैव च यो जपेत्

विज्ञ साधकों को इस विशिष्ट 'कवच' के शोधन के प्रति ध्यान देना चाहिए। इस सम्बन्ध में प्रामाणिक सूचना मिलने पर उसे सादर 'कौल-कल्पतरु' चण्डी में प्रकाशित किया जायगा।

हिन्दी समस्त-मंगल नामक स्त्री-गुरु-कवच

।। पूर्व-पीठिका ।।

श्री देवी बोलीं—अब मुझसे स्त्री-गुरु का कवच कहिए, जिसके जानने मात्र से पुनर्जन्म नहीं होता।

श्री शिव ने कहा—हे देवेशि! आदर के साथ स्त्री-गुरु-कवच को सुनो, जिसके सुनने मात्र से सुननेवाला वागीश्वर के समान हो जाता है।

।। सविधि समस्त-मङ्गल नामक स्त्री-गुरु-कवच ।।

पहले पृष्ठ २८ पर दिये विनियोग और ऋष्यादि-न्यास को करें। तब कवच का पाठ करें—

'क्लीं' बीज मेरे शिर की और उनका नाम मेरे ललाट की रक्षा करे। 'क्लीं' बीज दोनों नेत्रों की और सदा-शिव मेरे सारे शरीर की रक्षा करें ।।१।।

'ऐं' बीज मेरे मुख की रक्षा करे। 'ह्रीं' मेरी जीभ की रक्षा करे। 'श्रीं' बीज मेरे कन्धों की और 'ह्सखफ्रें' मेरी दोनों भुजाओं की रक्षा करे ।।२।।

'ह' मेरे कण्ठ-स्थान की, 'स' षोडश-दल-चक्र की, 'क्ष' नीचे के भाग की और 'ल' मेरे हृदय की रक्षा करे ।।३।।

'ब' पीठ की, 'र' दाएँ पार्श्व (बगल) की, 'यूं' बाएँ पार्श्व की और 'स' मेरु (?) की रक्षा करे ।। ४

'ह' दाईं भुजा की, 'क्ष' बाएँ हाथ की, 'म' अँगुलियों की और 'ल' मेरे नाखूनों की रक्षा करे ।।५

'व' मेरे नितम्ब की, 'र' मेरे पेट की, ईं दोनों पैरों की, 'ह्सौः' सभी अङ्गों की रक्षा करे ।।६

'ह्सौः' लिङ्ग और लोमों तथा केश की रक्षा करे। 'ऐं' बीज पूर्व में मेरी रक्षा करे। 'ह्रीं' बीज दक्षिण में रक्षा करे ।।७ (शेष पृष्ठ ३१ के नीचे)

कवच-पाठ के बाद स्तुति द्वारा श्रीगुरुदेव को प्रणाम करे—

श्रीगुरु-प्रणाम स्तुतिः

अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्, तत् पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।१
अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया, चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।२
देवतायाः दर्शनं च करुणा-वरुणालयम्, सर्व-सिद्धि-प्रदातारं, श्रीगुरुं प्रणमाम्यहम् ।।३
वराभय-करं नित्यं श्वेत-पद्म-निवासिनम्, महा-भय - निहन्तारं गुरुदेवं नमाम्यहम् ।।४
महा-ज्ञानाच्छादिताङ्गं नराकारं वर-प्रदम्, चतुर्वर्ग-प्रदातारं स्थूल-सूक्ष्म-दयान्वितम् ।।५
सदानन्द-मयं देवं नित्याञ्जन-निरञ्जनं, शुद्ध-सत्त्व-मयं देवं नित्य-कालं कुलेश्वरम् ।।६
ब्रह्म-रन्ध्रे महा-पद्मे तेजो-बिम्बे निराकुले, योगिभिर्योग-गम्ये च चारु-शुक्र-विराजिते ।।७

(पृष्ठ ३० का शेषांश)

'श्रीं' बीज पश्चिम में, उत्तर में भूत-सम्भव रक्षा करे । 'ऐं' अग्नि-कोण में और वेदाद्य (ॐ) नैऋत-कोण में रक्षा करे ।।८

देव्यम्बा वायव्य कोण में, श्री शम्भु श्रीपादुका की रक्षा करें । 'पूजयामि' शब्द ऊर्ध्व-भाग की और 'नमः' सदा अधो भाग की रक्षा करे ।।९

।। फल-श्रुति ।।

हे कान्ते ! इस प्रकार परम विलक्षण 'कवच' तुमसे कहा गया । गुरु-मन्त्र का जप कर यदि 'कवच' का पाठ करे, तो वह साधक 'सिद्ध' होता है, देवी का 'गण' होता है और वही साक्षात् 'शिव'-स्वरूप होता है, इसमें सन्देह नहीं ।।१

हे महेश्वरि ! जो पूजा के समय मन्त्रात्मक 'कवच' का पाठ करता है, उसे पूजा का पूरा फल मिलता है, यह सर्वथा सत्य है ।।२

भोज-पत्र में लिखकर, उसकी गुटिका बनाकर स्वर्ण में स्थापित कर यदि इसे धारण करे, तो धारण करनेवाले के दर्शन मात्र से विरोधी हत-प्रभ हो जाते हैं ।।३

विवाद में, युद्ध में और सभा में वह नैऋत्य के समान विजय पाता है और मेरे समान प्रतापी होता है, इसमें सन्देह नहीं ।।४

जो सहस्रार में भावना करते हुए, तीनों सन्ध्या-कालों में इसका पाठ करता है, वह सिद्ध लोकेश होकर निर्वाण-पद को प्राप्त करता है ।।५

'समस्त-मङ्गल' नामक यह 'कवच' अत्यन्त विलक्षण है । जिस किसी को इसे न देना चाहिए, कभी इसे प्रकट न करना चाहिए ।।६

शान्त शिष्य को ही इसे देना चाहिए, अन्यथा यह निष्फल हो जाता है । हे देवेशि ! पुत्रों को भी, यदि वे भक्ति-हीन हों, तो इसे नहीं दिखाना चाहिए ।।७

इस 'कवच' को जाने बिना जो दश महा-विद्याओं के मन्त्र का जप करता है, वह उस जप का फल नहीं पाता और अन्त में नरक को जाता है ।।८

सहस्र-दल-सङ्काशे कर्णिका-मध्य-मध्यके, महा-शुक्ल-भास्वरार्क-कोटि-कोटी-महौजसम् ।।८
सर्व-पीठस्थममलं पर-हंसं परात्परम्, वेदोद्धार-करं नित्यं काम्य - कर्म-फल-प्रदम् ।।९
सदा मनः-शक्ति-मयं लय-स्थान-पदाम्बुजं, शरज्ज्योत्स्ना-ज्वलन्नात्मा शोभेन्दु-कोटि-वन्मुखं ।१०
वांछातिरिक्त-दातारं सर्व-सिद्धीश्वरं गुरुम्, भजामि तन्मयो भूत्वा तं हंस-मण्डलोपरि ।।११
आत्मानं सुनिराकारं साकार-ब्रह्म-रूपिणम्, विद्यान् मन्त्र-प्रदातारं श्रीगुरुं परमेश्वरम् ।
सर्व-सिद्धि-प्रदातारं गुरुदेवं नमाम्यहम् ।।१२
कायेन मनसा वाचा ये नमन्ति निरन्तरम्, अवश्यं श्रीगुरोश्चैव पदाम्भोजे वसन्ति हि ।।१३

हिन्दी श्रीगुरु-प्रणाम-स्तुति

एक-निष्ठ भक्ति के साथ इस स्तुति द्वारा श्रीगुरुदेव को प्रणाम करे। इससे 'आयु' और 'आरोग्य' की वृद्धि होती है—

अखण्ड-मण्डलाकार, चर और अचर, सारा जगत् जिन परा - शक्ति के द्वारा व्याप्त है, उनके गौरव का जो दर्शन कराते हैं, उन श्रीगुरुदेव को नमस्कार। अज्ञान-रूपी अँधेरे से अन्धे व्यक्ति की आँखों को जो ज्ञान-रूपी अञ्जन की शलाका से खोल देते हैं, उन श्री गुरुदेव को नमस्कार। देवता के दर्शन और सर्व-सिद्धियों के देनेवाले दया-सागर श्री गुरुदेव को मैं प्रणाम करता हूँ। सदैव वर और अभय से युक्त हाथोंवाले, श्वेत कमल पर विराजमान रहनेवाले और बड़े-से-बड़े भय को नष्ट करनेवाले श्री गुरुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ ।।१-४

महान् ज्ञान से व्याप्त शरीरवाले, मनुष्याकार, वर-दाता, चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) के देनेवाले, स्थूल और सूक्ष्म दया-भाव से समन्वित, सदा आनन्द-मय रहनेवाले देवता-स्वरूप, सदैव निर्विकार शिव-स्वरूप, शुद्ध-सत्त्व-गुण से परिपूर्ण देवता, नित्य-काल एवं कुलेश्वर-स्वरूप, सभी पीठों पर विराजमान निर्मल, परात्पर, वेदोद्धार-कर्ता, काम्य कर्मों के फल को देनेवाले परमहंस-स्वरूप, सदा मनोबल से परिपूर्ण, मोक्ष-स्थान पर चरण-कमलों को रखनेवाले, शरद्-कालीन चाँदनी-जैसी उज्ज्वल आत्मावाले, करोड़ों चन्द्रमाओं की शोभावाले मुख-मण्डल से युक्त, मनोकामना से भी अधिक देनेवाले, सभी सिद्धियों के स्वामी, अत्यन्त उज्ज्वल चमकीले करोड़ों सूर्यों जैसे महान् ओजवाले श्री गुरुदेव का भजन मैं उनमें तन्मय होकर योगियों द्वारा अपनी योग-विद्या से ज्ञात किये जानेवाले, सुन्दर वीर्य-युक्त सहस्र-दल-कमल की कर्णिका के मध्य में हंस-मण्डल के ऊपर करता हूँ ।। ५-११

आत्मा से निराकार और साकार ब्रह्म-रूपी, विद्याओं और मन्त्रों के देनेवाले, सभी सिद्धियों के प्रकृष्ट दाता, परमेश्वर श्री गुरुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ ।।१२

फल-श्रुति

शरीर, मन और वाणी से जो सदैव इस प्रकार नमस्कार करते हैं, वे निश्चय ही श्रीगुरुदेव के चरण-कमलों में निवास करते हैं ।।१३

बिहार में शक्ति-साधना
बिहार में शक्ति-साधना
बिहार में शक्ति-साधना
बिहार में शक्ति-साधना
मूल्य
रु० दस
मात्र
इतिहास एवं
प्रेरणा-दायक व्यक्तित्व पर
प्रकाश डालनेवाली सुन्दर पुस्तक।
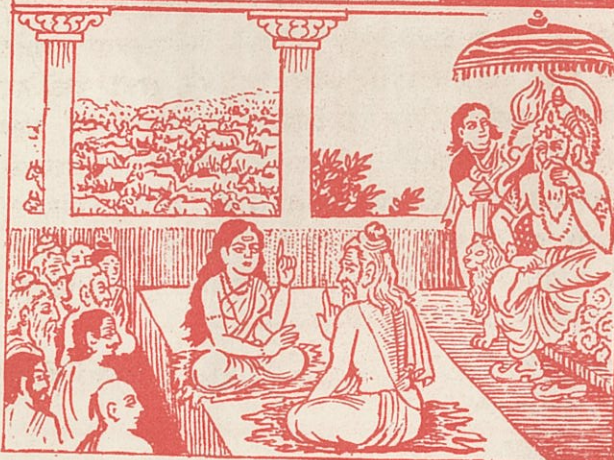
मेरी भक्ति • गुरू की शक्ति • फुरो मन्त्र • ईश्वरो वाचा •

शाबर मन्त्र-संग्रह

मेरी भक्ति • गुरू की शक्ति • फुरो मन्त्र • ईश्वरो वाचा •

विधि-सहित शाबर-मन्त्रों का शोध-पूर्ण संग्रह

छः भागों में

छहों भागों का मूल्य १०५-०० रु०

प्राप्ति-स्थानः चण्डी-कार्यालय, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग-२११००६ (उ०प्र०)